

मई / जून 2026

रूहानी रिश्ता

साइंस ऑफ़ द सोल रिसर्च सेंटर

विषय सूची

- 4 एक दोस्त को लिखा पत्र
- 5 डर से विश्वास तक
- 11 एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण
- 14 सिमरन के ज़रिए मुक्ति
- 20 सत्य क्या है?
- 23 स्मार्टफोन: उदासी का कारण?
- 27 सफ़ेद सूती कुर्ता पजामा
- 29 सेवा का असली मक़सद
- 33 एक वृद्ध सेवादार का क़बूल करना
- 36 प्यार का निमंत्रण
- 40 हमारा दिल बेचैन है
- 47 ख़्वाब से परे सच
- 48 हम इस प्रेम का अनुभव कर चुके हैं
- 53 इस संसार से उखाड़ लिए जाना

रूहानी रिश्ता

Science of the Soul Research Centre
Guru Ravi Dass Marg, Pusa Road, New Delhi-110005, India
Copyright © 2026 Science of the Soul Research Centre®

बिना स्रोत के कुछ लेख और कविताएँ इस पत्रिका के लेखकों द्वारा लिखी गई हैं ।

भाग 22 • अंक 3 • मई जून 2026

एक दोस्त को लिखा पत्र

24 अक्टूबर, 1972

मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि तुम कितना अकेलापन महसूस कर रहे होगे। ...पर अगर तुम दूसरे दृष्टिकोण से देखो तो तुम्हें खुश होना चाहिए कि कम से कम तुम्हें अपने लिए समय तो मिलता है और तुम कुछ समय अपने साथ शांति और चैन से तो बिता सकते हो।

अकेले रहना एक दुर्लभ दात और मौक़ा है, खासकर तब जब हम पारिवारिक जीवन के इतने आदी हो चुके हों। अकेले रहकर हम सोच-विचार कर सकते हैं, अपने अंदर झाँक सकते हैं। तब हम देख पाते हैं कि हमें बेकार ही अपने आसपास के लोगों से इतना लगाव है और कैसे हम अपने आप को धोखा देने की कोशिश करते हैं कि कोई हमारा है या हम किसी के हैं। इस बात का एहसास हो जाना कि हम अकेले हैं और इस दुनिया में हमारा कुछ भी नहीं है, एक बहुत बड़ा वरदान और परमात्मा की दया-मेहर है। फिर स्वाभाविक तौर पर हम इस अकेलेपन को दूर करने के लिए उससे मार्गदर्शन और सहायता माँगते हैं जो आख़िरकार हमारा लक्ष्य है।...

फिर भी मैं इतना भाग्यशाली नहीं हूँ कि मैं अकेला रह सकूँ क्योंकि मैं या तो सेवा के कार्यों में व्यस्त रहता हूँ या मित्रों और परिवार में। मुझे अपने फ़र्ज़ को अच्छी तरह से निभाना है और अपने आप में खुश रहना है।... मैंने अपने आप को उस कर्तव्य और ध्येय के प्रति पूरी तरह से अर्पित कर दिया है जो मुझे सौंपा गया है और मैं उसे पूरा करने की हर संभव कोशिश कर रहा हूँ। मैं अपने सतगुरु का बहुत आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे इतनी ताक़त बख़्शी है कि रोज़ की इस दिनचर्या का पालन कर सकूँ और प्रशासन संबंधी समस्याओं का सामना कर सकूँ।...

बेशक कभी-कभी एक पति और पिता होने की ज़िम्मेदारी मुझे अपनी पत्नी और बच्चों का ध्यान दिलाती है, लेकिन मैं जानता हूँ कि मैं अपने आप कुछ नहीं कर सकता, क्योंकि सब कुछ महाराज जी के हाथ में है।

महाराज चरन सिंह जी, अनमोल ख़ज़ाना (से उद्धरित)

डर से विश्वास तक

हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी अनमोल खज़ाना पुस्तक में फ़रमाते हैं, “प्रेम की गहराई को जानने के लिए प्रियतम का वियोग आवश्यक है।” सूफ़ी कामिल दरवेश शम्स तब्रीज़ी ने भी अपने मुरीद रूमी को इबादत में पुख़्ता करने के लिए खुद को अलग करना ज़रूरी समझा था।

जब यह घोषणा हुई कि बाबा जी ने हुज़ूर जसदीप सिंह जी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया है तब हम सब डर गए कि कुछ बहुत बुरा होने वाला है; हममें से बहुत-से लोगों पर यह डर हावी हो गया, भले ही घोषणा में स्पष्ट तौर पर यह कहा गया था कि बाबा जी “पूरी तरह से स्वस्थ हैं।” लेकिन क्या हमने इस पर विश्वास किया? हमने अपने डर को अपने विश्वास पर हावी होने दिया। हममें से कई लोग मौक़ा मिलते ही भारत पहुँच गए क्योंकि चाहे कुछ भी हो जाए, हमें बाबा जी के दर्शन करने थे! बहुत-से लोग जो नहीं जा सके, उन्हें इस बात का खेद था, वे चिंतित और बेबस महसूस कर रहे थे। जब तक कि बाबा जी के अगली गर्मियों में होने वाले सत्संग कार्यक्रम की घोषणा नहीं हुई तब तक, हमें भी विश्वास नहीं हुआ कि बाबा जी वाकई स्वस्थ हैं, कम से कम अभी तक तो।

दरियादिल और दयालु बाबा जी ने हम पर तीन तरह से बख़्शिश की जिससे हम सब की चिंता दूर हो गई। सबसे पहले उन्होंने हमें वक़्त दिया ताकि हम उनके देहस्वरूप की जुदाई जोकि अटल सच है, को स्वीकार कर पाएँ और इस दुःख को विरह में बदलने की और ज़्यादा कोशिश करें जब तक कि वह देहस्वरूप में हमारे साथ हैं। दूसरी बख़्शिश थी दर्शन: वह बहुत सारी जगहों पर गए ताकि हम उनके दर्शन कर सकें।

बाबा जी की तीसरी बख़्शिश थी कि उन्होंने हमें भविष्य के लिए तैयार होने का मौक़ा दिया जिसे टाला नहीं जा सकता। उन्होंने हमें नए सतगुरु के रूप में एक और सहारा दिया जिससे हम नाता जोड़ सकें और धीरे-धीरे उनके लिए अपना प्रेम बढ़ा सकें।

इस समय हमारा अपने सतगुरु के साथ कैसा नाता है? खुशी और सफलता मिलने पर हम उनका शुक्रिया अदा करते हैं चाहे वे हुजूर महाराज जी हों, बाबा जी हों या हुजूर जी। मुसीबत और दुःख की घड़ी में, हम मदद के लिए उन्हें ही पुकारते हैं। चाहे हमारे सतगुरु चोला छोड़ गए हों या वह हमसे मीलों दूर दुनिया के किसी दूसरे कोने में हों, हम मन ही मन उनसे बातें करने लगते हैं और हमें विश्वास होता है कि वह हमारी बात सुन रहे हैं। एक बार जब हुजूर जी डेरा में विदेशी सत्संगियों के साथ शाम के समय होनेवाली मीटिंग में अकेले आए तब किसी ने उनसे पूछा कि बाबा जी क्यों नहीं आए। हुजूर जी ने बड़ी दृढ़ता से कहा कि बाबा जी उनके साथ हैं। और हुजूर महाराज जी तो अकसर सत्संगियों को मज़ाकिया अंदाज़ में कहा करते थे कि वह उनके साथ तब भी होते हैं जब वह देहस्वरूप में मौजूद नहीं होते।

सतगुरु हमारे साथ हैं— भले ही हम उन्हें देख न पाएँ या महसूस न कर पाएँ। हम जहाँ भी हैं, वह वहीं हैं क्योंकि वह शब्द स्वरूप में हमारे अंदर मौजूद हैं। सतगुरु सदा हमारे साथ रहेंगे, चाहे कुछ भी हो, चाहे पहले हमारी मृत्यु हो जाए या वह चोला त्याग दें। उनके साथ हमारा अंदरूनी रिश्ता हमेशा बना रहेगा। हमें इसी रिश्ते पर ध्यान देना है और इसे ही मज़बूत बनाना है। जैसा कि हुजूर महाराज जी ने फ़रमाया है:

सतगुरु शिष्य का साथ कभी नहीं छोड़ते। शिष्य के लिये सतगुरु हमेशा जीवित रहते हैं क्योंकि शरीर गुरु नहीं है। गुरु वह दिव्य धुन है जो हम सबके अंदर है। शिष्य भी शरीर नहीं है। आत्मा शिष्य है और शब्द गुरु है। एक बार जब जीव की सुरत को शब्द के साथ जोड़ दिया जाता है तो शब्द आत्मा को कभी नहीं छोड़ता।...

जब सतगुरु हमें नामदान देते हैं तो उनकी ज़िम्मेदारी तब तक पूरी नहीं होती, जब तक वे हमें वापस परमात्मा के पास न पहुँचा दें। चाहे वे अगले दिन ही अपना शरीर त्याग दें, पर हमें वापस परमपिता

परमात्मा के पास ले जाने में हमारा मार्गदर्शन करने के लिये वे अंतर में हमेशा हमारे साथ होते हैं। हमने मार्गदर्शन के लिये केवल अपने सतगुरु की ओर ही देखना है और अंतर में हमें हमेशा अपने सतगुरु ही मिलेंगे।
संत संवाद, भाग3

हमें जुदाई के डर को इस विश्वास में बदलना होगा कि जिस सतगुरु ने हमें नामदान बरखा है वह अपने नूरी स्वरूप में हमेशा हमारे साथ रहेंगे। लेकिन अगर हम सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन न कर पाए तो? संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि सतगुरु का नूरी स्वरूप असल में निराकार है। अंदर केवल प्रकाश और आवाज़ है। मगर क्योंकि हमने सतगुरु की पहचान उनके देहस्वरूप से जोड़ी हुई है इसलिए अंतर में शब्द उसी रूप में प्रकट होता है। लेकिन आखिर में वह स्वरूप आवाज़ और प्रकाश में समा जाता है। हम उसकी ओर खिंचे चले जाते हैं, उसे पहचान लेते हैं, उससे हमें सुकून मिलता है और हमें महसूस होता है कि यही मेरे सतगुरु हैं।

सतगुरु निराकार स्वरूप में दुनियावी और रूहानी सभी पड़ावों पर हमारा मार्गदर्शन करते हैं। तब भी जब वह इस दुनिया में हमारे बीच नहीं होते। हमारे रूहानी सफ़र के दौरान भी वह हमेशा हमारा मार्गदर्शन करते हैं। इस बात को अनुभव करने का एकमात्र तरीका यह है कि हम डर से विश्वास तक का सफ़र तय करें।

हमें इस बात का एहसास कैसे हो सकता है कि हम हमेशा सतगुरु की छत्रछाया में हैं? यह सिर्फ़ सतगुरु के नूरी स्वरूप से जुड़कर ही हो सकता है जो असल में शब्द ही है। अपनी सुरत को शब्द से जोड़कर, हम अपने सतगुरु की शरण ले सकते हैं। तुलसी साहब समझाते हैं:

जगत गुरु नहिं संत पुकारा। सतगुरु भेद जगत से न्यारा॥
जो कोइ चढ़ै गगन को धावै। सो सतगुरु के सरनै आवै॥
तुलसी साहिब: हाथरस के परम सन्त

सतगुरु के देहस्वरूप के दर्शन कर लेने से हम उनके असल स्वरूप को नहीं समझ सकते। अंतर में सतगुरु के साथ रिश्ते को मज़बूत करने के लिए हमें सतगुरु से किए गए वायदों को निभाना होगा। हमें शाकाहारी भोजन को अपनाते हुए, मादक पदार्थों से परहेज़ करते हुए नैतिक जीवन जीना है और भजन-सिमरन का अभ्यास करना है जैसा कि हमें नामदान के समय बताया गया था।

शरीर नश्वर है। भजन-सिमरन हमें मृत्यु के डर से उबरने और अपने सच्चे स्वरूप जोकि अमर-अविनाशी है, से जुड़ने में मदद करता है। भजन-सिमरन तनाव-मुक्त और संतुष्ट जीवन जीने में मदद करता है। यह हमें शब्द-गुरु से मिला देता है और शब्द की रचनात्मक शक्ति में अभेद कर देता है। भजन-सिमरन करना हमेशा लाभदायक होता है चाहे हम इस बात पर विश्वास करें या न करें। भजन-सिमरन द्वारा हम आंतरिक रूहानी मंडलों में दाखिल होते हैं और अपने निज-घर की ओर बढ़ते हैं। हमें शब्द-गुरु तक पहुँचने के लिए भजन-सिमरन का सबसे सशक्त साधन दिया गया है। अब उस ज्ञान को करनी में लाने की ज़रूरत है।

हमारे सतगुरु ने हमें नाम का अथाह भंडार दे दिया है। हमें इसी जीवन में इस खज़ाने का लाभ उठाकर नाम के रंग में रँग जाना है। स्वामी जी महाराज सारबचन संग्रह पुस्तक में आनेवाले कल की अनिश्चितता की याद दिलाते हुए हमें चेतावनी देते हैं: “मौत से डरत रहो दिन रात।”

स्वामी जी महाराज ज़ोर देकर समझाते हैं कि हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि यह शरीर नश्वर है और इसे खोने के डर पर क़ाबू पाने के लिए हम जो कर सकते हैं हमें वह करना चाहिए। सिर्फ़ भजन-सिमरन के ज़रिए ही सतगुरु के प्रति हमारा भरोसा बढ़ सकता है इसी से हम अपने डर पर क़ाबू पा सकते हैं और हमारा भरोसा क़ायम रह सकता है। संत-महात्मा याद दिलाते हैं कि यह भरोसा बाहरी ज्ञान से नहीं बल्कि भजन-सिमरन करने से आता है जिसके फलस्वरूप हमें अनुभव प्राप्त होता है। यह निजी अनुभव ही हमारे विश्वास का आधार बनता है। इसकी शुरुआत भजन-सिमरन से होती है।

सिमरन ही मुक्ति के द्वार की कुंजी है जो हमें परमात्मा से मिलाती है। सिमरन ही वह एकमात्र भाषा है जिससे हम निरंतर अपने सतगुरु से जुड़े रह सकते हैं। हर रोज़ सिर्फ़ ढाई-घंटे भजन-सिमरन करने से नहीं बल्कि चौबीस घंटे उनके साथ जुड़े रहने से हमें उनके सर्वव्यापक होने का एहसास होता है।

हमारे इस संघर्ष-भरे सफ़र के दौरान हमारा सच्चा दोस्त हमसे कभी दूर नहीं होता, कभी जुदा नहीं होता। सिमरन हमारी ज़िंदगी का अभिन्न अंग बन जाता है। संतजन समझाते हैं कि लगातार सिमरन करने से धीरे-धीरे यह हमारा स्वभाव बन जाता है फिर चाहे हम इस बारे में सचेत न भी हों यह अपने आप ही चलता रहता है। निरंतर सिमरन हमें शब्द से जोड़ देता है तथा हमारी निरत और सुरत जागृत हो जाती है।

हमसे कहा जाता है कि भजन-सिमरन के दौरान हमें बस बैठना है और सिमरन शुरू कर देना है बाक़ी सब सतगुरु करेंगे। हम ही हैं जो उन पर नहीं छोड़ते। न तो हमें खुद पर भरोसा है कि हम इन मुश्किलों को पार कर सकते हैं और न ही हमें अपने सतगुरु के वचनों पर विश्वास है जब वह कहते हैं कि हम यह कर सकते हैं।

हमने कई बार सुना है कि संतमत में कोई असफल नहीं होता। जब हम अपनी पूरी कोशिश करते हैं तब परमात्मा से मिलाप होना निश्चित है। जब सतगुरु ने हमें नामदान बख़्शा था तब उन्होंने हमसे वायदा किया था कि परमात्मा से मिलाप करवाने में वह हमारी मदद करेंगे। हम किस बात का इंतज़ार कर रहे हैं? पैग़ंबर मोहम्मद ने परमात्मा के वायदे के बारे में फ़रमाया था:

मैं (अल्लाह) अपने बंदे के साथ हूँ जब वह मेरे बारे में सोचता है। मैं उसके साथ हूँ जब वह मुझे याद करता है। अगर वह मुझे खुद में याद करता है तो मैं उसे अपने आप में याद करूँगा। अगर वह मुझे लोगों के बीच में याद करता है तो मैं उसे उससे बेहतर लोगों के बीच में याद करूँगा। अगर वह एक क़दम भी मेरे करीब आता है तो मैं सौ गुना उसके करीब आऊँगा। और जब वह चलकर मेरे पास आता है तब मैं दौड़कर उसके पास आऊँगा।

राबिया: द वुमन हू मस्ट बी हर्ड

हमारे सतगुरु अब भी हमारे साथ हैं और वह तब तक हमारे साथ रहेंगे जब तक वह हमें परमात्मा के पास नहीं पहुँचा देते। हम उन्हें सदा याद करते रहेंगे तब भी, जब वह देहस्वरूप में हमारे साथ नहीं होंगे और तब भी, जब वह हमारी आँखों के बिलकुल सामने होंगे। उनकी जुदाई की यह पीड़ा तब तक हमारे साथ रहेगी जब तक हम अंतर में उनमें अभेद नहीं हो जाते और आखिरकार हमें मुक्ति नहीं मिल जाती। जैसा कि शेख फ़ख़रुद्दीन इराक़ी 'द फेस इन एवरी रोज़' में लिखते हैं: "ख़ुश है वह दिल जो तुम्हारी जुदाई की पीड़ा के ज़रिए मुक्ति पा लेता है।"



एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण

सरदार बहादुर जगत सिंह जी के हाथ से लिखे पत्रों में से कुछ अंश नीचे दिए गए हैं।

वैज्ञानिक सोच तर्क पर आधारित होती है। यह किसी भी निर्णय पर पहुँचने से पहले सबूत इकट्ठा करती है और इसमें विश्लेषण, गलतियों और तर्क पर आधारित नए अनुमानों की संभावना होती है। दूसरे शब्दों में, जब कोई व्यक्ति किसी समस्या के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाता है तब वह ध्यान से उसका अध्ययन करता है, उस ज्ञान को अमल में लाता है और सुनी-सुनाई बातों या आम मान्यताओं के बजाय नतीजों के आधार पर निष्कर्ष निकालता है।

सरदार बहादुर जी ने कृषि से जुड़ी एक ख़ास समस्या के बारे में बात करते हुए वैज्ञानिक सोच को अपनाने के बारे में एक उपयोगी सलाह दी। आप ने समझाया:

फिलहाल, मैं आपसे अर्ज़ करता हूँ कि इस समस्या का समाधान या नतीजा प्राप्त करने के लिए पूरी तरह से वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाएँ... इसका अर्थ यह है कि अन्य समस्याओं की तरह ही, इस विषय पर उपलब्ध साहित्य का अध्ययन करें और इस विषय के प्रोफ़ेसरों से संपर्क करें ताकि उनसे वह ज्ञान बटोरा और सीखा जा सके जिसे वे पहले से ही हासिल कर चुके हैं। समस्या को अलग-अलग भागों में बाँट लें, एक-एक करके हरेक भाग के बारे में कोई तार्किक अनुमान लगाएँ और अंत में उस अनुमान को तथ्य में बदलने के लिए प्रयोग करें, यदि प्रयोग द्वारा वह अनुमान सही साबित न हो तो एक नया अनुमान लगाएँ और फिर से प्रयोग द्वारा उसकी जाँच करें।

मुझे लगता है कि इसे ही लोग वैज्ञानिक दृष्टिकोण कहते हैं। इसी तरह से गन्ने की नई फ़सलें उगाई जाती हैं। अगर सच कहूँ तो वैज्ञानिक दृष्टिकोण और चिंता एक साथ नहीं चल सकते। जब मन चिंतित होता है तो इसका मतलब है कि समस्या का समाधान वैज्ञानिक तरीके से नहीं किया जा रहा है।

जिंदगी की समस्याओं या शंकाओं से निपटते समय वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाते से हमें विधिपूर्वक सही समाधान ढूँढ़ने में मदद मिलती है। सबसे अच्छी बात यह है कि इस तरह हमारे पास चिंता करने के लिए न तो समय बचता है और न ही ऊर्जा।

यहाँ तक कि जीवन के सबसे बड़े सवालों पर भी जैसे 'मैं कौन हूँ?', 'इस दुनिया में मेरा क्या मकसद है?' या 'आगे क्या होने वाला है?' – अपनी समझ को सिद्धांतों से धुंधला करने के बजाय क्यों न वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाते हुए अनुभव द्वारा ही किसी नतीजे पर पहुँचा जाए?

हकीकत के बहुत से स्तर हैं, जिनमें से ज़्यादातर के बारे में हम पूरी तरह से अनजान हैं और वैज्ञानिक प्रयोगों के ज़रिए हम परत-दर-परत उन्हें जान सकते हैं, बिना उन सब बाधाओं के जो हमने अपनी पहले से बनी धारणाओं और बेकार की चिंताओं की वजह से खुद खड़ी की हुई हैं।

सरदार बहादुर जी ने आगे फ़रमाया:

सत्य और असत्य (भ्रम) या नित्यता और बदलाव..साथ-साथ चलते हैं; जहाँ भी असत्य या बदलाव होता है..., वहाँ सत्य या नित्यता भी मौजूद होती है। शून्य में बदलाव नहीं होता। बदलाव किसी चीज़ में होता है। यदि बदलाव के कारण भौतिक संसार भ्रम है तो अणुओं से बना संपूर्ण संसार इसलिए सत्य है क्योंकि मनुष्य अणुओं से बना है। यदि अणुओं से बना संसार इसलिए भ्रम है क्योंकि अणु टूट जाते हैं तो परमाणुओं से बना संसार असल है क्योंकि परमाणु ही अणुओं को बनाते हैं। यदि परमाणु जगत भ्रम है क्योंकि परमाणु बदलते हैं तो इलेक्ट्रॉनिक दुनिया सत्य है क्योंकि परमाणु इलेक्ट्रॉनों से बने होते हैं।

अतः जहाँ कहीं भी बदलाव होता है, उसके पीछे कोई सच होता है जिसमें वह बदलाव हो रहा होता है। यदि बर्फ़ के रूप में पानी का अस्तित्व न रहे तो वह तरल अवस्था में आ जाता है और यदि वह तरल अवस्था में भी न रहे तो वह गैसीय अवस्था में आ जाता है।

अतः यदि संसार असत्य है तो हमारा शरीर भी सत्य नहीं है। जब तक हम इस शरीर में हैं तब तक हमारे लिए इस संसार का अस्तित्व है। यदि हम अपने आप को इस स्थूल शरीर से अलग करके अपने सूक्ष्म स्वरूप को पहचान लें तो हम स्वयं ही भौतिक जगत से सूक्ष्म जगत में चले जाते हैं। और यदि फिर से हम स्वयं को सूक्ष्म शरीर से अलग करके अपने उससे भी अधिक सूक्ष्म स्वरूप को पहचान लें तो हम अपने आप ही उस सूक्ष्म जगत से भी ज़्यादा सूक्ष्म जगत में चले जाते हैं—धीरे-धीरे हम परिवर्तनशील और अवास्तविक जगत से अपरिवर्तनशील और वास्तविक जगत की ओर बढ़ते हैं। सत्य हमारे भीतर है; सत्य ही हमारे अस्तित्व का आधार है।

हमारा शरीर वह प्रयोगशाला है जिसमें हमें यह खोज करनी है और इस सत्य तक पहुँचना है। कृपया वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाएँ जिसका अर्थ है हमें चिंता करना छोड़कर अपने आप को प्रयोग के लिए तैयार करना है।



सिमरन के ज़रिए मुक्ति

क़ैद दो तरह की होती है: एक वह जब हमें पता होता है कि हम क़ैद में हैं; दूसरी वह जब हमें यह पता ही नहीं होता। किस तरह की क़ैद ज़्यादा बंधनकारी और निराशाजनक है? ज़ाहिर है, दूसरी तरह की, क्योंकि अगर हमें यह पता ही नहीं कि हम क़ैदी हैं तो हम आज़ाद होने के बारे में सोचेंगे ही नहीं। लेकिन जब हम यह जान जाते हैं कि हम क़ैद में हैं तब हम आज़ाद होना चाहते हैं या इस क़ैद से आज़ाद होने के हर संभव मौक़े की तलाश में रहते हैं।

कल्पना करें कि कोई क़ैदियों को आज़ाद करवाने के लिए आता है। कौन से क़ैदी उसके आह्वान को सुनते ही उसके पास दौड़े चले आते हैं? क्या वे जो जानते हैं कि वे क़ैदी हैं और आज़ाद होने के लिए तरस रहे हैं या वे जिन्हें पता ही नहीं है कि वे क़ैदी हैं? ज़ाहिर है, पहले वाले क़ैदी। दूसरी तरह के क़ैदियों की तो समझ में ही नहीं आता कि आज़ाद करवानेवाला किस बारे में बात कर रहा है।

इस अजीब-सी जेल में कुछ लोग जानते हैं कि वे क़ैदी हैं और कुछ को तो पता ही नहीं कि यह हमारी जेल है जिसे हमने खुद अपनी भ्रमित और बेक्राबू सोच से बनाया है।

बाबा जी के साथ हाल ही में हुए सवाल-जवाब के दौरान किसी ने शिकायत की कि वह सिमरन के दौरान अपने ध्यान को बिलकुल भी एकाग्र नहीं कर पाता। लेकिन संत-महात्मा सदियों से हमें यही बात समझाते आ रहे हैं कि हमारा अपने मन पर कोई क़ाबू नहीं है क्योंकि हमने इसे बिगाड़ दिया है। मन आसान से आसान रास्ता ढूँढ़ता है और हम इसे मनमानी करने की खुली छूट दे देते हैं। मन सिमरन न करने की हर संभव कोशिश करता है। इसलिए बजाय इसके कि आत्मा की मुक्ति के लिए हम मन को भजन-सिमरन द्वारा एकाग्र करने की कोशिश करें, हम इसे मनमानी करने देते हैं। बाबा जी का इशारा इस बात की ओर था कि हमने अपनी आज़ादी

खो दी है और अपने जीवन की बागडोर धोखेबाज़ मन के हाथों में सौंप दी है। आपके कहने का भाव है कि सिमरन ही हमारी मुक्ति का एकमात्र ज़रिया है। बाक़ी सब कुछ जैसे सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन होना और शब्द धुन को सुनना, उनकी दया मेहर से होता है। इसलिए सिमरन ही हमारे आत्मिक जीवन का आधार है क्योंकि जब तक आत्मा मन के साथ बँधी हुई है तब तक इसका जीवन अर्थहीन है। क़ैद होने की वजह से आत्मा भी उन्हीं उतार-चढ़ाव का अनुभव करती है जिनका अनुभव मन इस संसार में कर्मों का भुगतान देते हुए करता है।

सिमरन करने की कोशिश मात्र से ही हमें और ज़्यादा एहसास होने लगता है कि हम यहाँ क़ैदी हैं। हम अपने आस-पास की दीवारों के बारे में ज़्यादा सचेत होने लग जाते हैं और इनसे मुक्त होने के मौक़े ढूँढ़ने के लिए ज़्यादा सजग होने लगते हैं। हम मुक्ति के ऐसे मौक़े को कभी भी हाथ से नहीं जाने देते क्योंकि हम बहुत देर से उस मौक़े का इंतज़ार कर रहे हैं। सिमरन में नाक़ाम होने पर हमें इस बात का निजी अनुभव होता है कि हम अपने उन विचारों, जज़्बातों और कर्मों पर क़ाबू पाने में कितने लाचार हैं जो हमें इस क़ैद में फँसाकर रखते हैं। हर बार सिमरन करने की कोशिश करना और उसमें नाक़ाम होना जेल की दीवारों पर अपना सिर पटकने के सामान है; फिर हमें एहसास होता है कि हम मन की ताक़त के आगे कितने लाचार हैं और बिना मदद के हम इसके चंगुल से आज़ाद नहीं हो सकते।

दोनों तरह के क़ैदी बिना मदद के अपनी क़ैद से छूट नहीं सकते। वे दोनों फँसे हुए हैं। पहली क्रिस्म के क़ैदी की कोशिशें और जेल की दीवारों पर सिर पटकना शायद दूसरी क्रिस्म के क़ैदी को बेतुका और मूर्खतापूर्ण लगता है जो यह नहीं समझ पाता कि इतनी बेचैनी और वेदना की क्या वजह है। जेल की दीवारों का एहसास न होना आसान है। जेल में कई कोने हैं जहाँ बहुत सारी लज़ज़तें और प्रलोभन होते हैं। तो क्यों न वहीं रहें और उनका आनंद लें?

जुनून की हद तक जेल से भागने की चाहत रखने वाले कैदी असल में पागल नहीं होते। इसके उलट, उन्हें अपनी मुक्ति प्यारी होती है। यह परमात्मा की बख्शीश है क्योंकि उनकी व्यथा और तीव्र इच्छा उनके इस एहसास को गहरा कर देती है। वही आज़ाद होने के लिए दिए आह्वान को सुन सकेंगे, भले ही उस आह्वान की आवाज़ उन्हें स्पष्ट सुनाई न दे रही हो। हर आत्मा को कभी न कभी अपने कैद होने का एहसास होता है। यूनानी कवि कॉन्स्टेंटाइन पी. कवाफ़ी एक ऐसे व्यक्ति की भावनाओं को व्यक्त करते हैं जिसे इस बात का एहसास हो गया है कि वह अपनी ही बनाई कैद में बंदी है, बाहर की आज़ाद दुनिया से कटा हुआ है:

बिना किसी सहानुभूति, बिना किसी दया, बिना किसी शर्म के,
उन्होंने मेरे चारों तरफ़ मोटी और ऊँची दीवारें बना दी हैं।

और अब मैं यहाँ निराश बैठा हूँ।

मैं और कुछ नहीं सोच सकता: मेरा नसीब मेरे मन को दुःखी कर रहा है—
क्योंकि बाहर मेरे पास करने के लिए बहुत कुछ था।

जब वे दीवारें बना रहे थे तब किस तरह मेरा ध्यान इस ओर नहीं गया!
लेकिन मैंने कभी भी इन्हें बनाने वालों की आवाज़ नहीं सुनी, ज़रा-सी
भी नहीं।

धीरे-धीरे उन्होंने मुझे बाहरी दुनिया से अलग कर दिया है।

इस कविता में हम रूहानियत के जिज्ञासु की दयनीय स्थिति को महसूस कर सकते हैं, ख़ासकर अगर हम “बाहर” शब्द को “अंदर” शब्द से बदल दें क्योंकि हम जानते हैं कि मुक्ति का मार्ग अंदर है। परमात्मा के प्रेमी को महसूस होने लगता है कि वह बाहरी दुनिया में बुरी तरह से फँसा हुआ है। वह अंदर जा नहीं पा रहा जबकि अंदर देखने और अनुभव करने के लिए बहुत कुछ है। उसे महसूस होता है जैसे किसी ने अदृश्य रूप से उसे आंतरिक दुनिया से, सच्ची मुक्ति से दूर कर दिया हो। दीवारें बनाने वाले जब चुपचाप काम कर रहे थे, तब उसे क्यों नहीं सुनाई दिया? क्योंकि

वे उसके अपने विचार ही थे। ईट-दर-ईट, उसके बेक्राबू मन ने उसे उस मुक्ति से वंचित कर दिया जो निष्कपटता और अंदर जाने की इच्छाशक्ति से मिलती है।

वह अब क्या कर सकता है? वह खुद की बनाई हुई इस क़ैद के आगे बेबस है। अब उसके पास और कोई रास्ता नहीं है सिवाय इसके कि वह किसी ऐसे अनुभवी मार्गदर्शक के पास जाए जो इस बात को जानता है कि आत्मा को क्या दुःख है। हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी पुस्तक स्पिरिचुअल पर्सपेक्टिव्स, वॉल्यूम I में फ़रमाते हैं:

संत-महात्मा हमें मुक्त करवाने के लिए आते हैं। हम सब यहाँ क़ैदी हैं। संत-महात्मा इस जेल का दरवाज़ा खोलकर हमें आज़ाद करवाना चाहते हैं। यही उनका असली मक़सद और उद्देश्य होता है और वे हमें यही उपदेश देते हैं।

हम अपनी निष्कपट, निर्मल आंतरिक दुनिया से दूर हो गए हैं और चाबी हमसे कहीं खो गई है। सतगुरु हमें सिर्फ़ जगाने ही नहीं आते; वह हमें हमारी खोई हुई मासूमियत और मुक्ति को फिर से पाने की चाबी देने के लिए भी आते हैं। वह चाबी है सिमरन। यह चाबी दूसरी चाबियों की तरह काम नहीं करती; इसे इस्तेमाल करना उतना आसान नहीं है जितना कि चाबी घुमाकर दरवाज़ा खोलना।

सिमरन की चाबी प्राचीन चीज़ों का अध्ययन करने वाले विशेषज्ञ (archeologist) के कुदाल और ब्रश की तरह काम करती है जो मलबे की परतों को हटाकर उसके नीचे दबे खज़ाने को बाहर ले आता है जो हमेशा से वहीं था लेकिन पहले उस पर किसी का ध्यान नहीं गया। हमारे पूर्व जन्मों के विचार और संस्कार हमारी आत्मा पर छपे हुए हैं। इन संस्कारों ने हमें क़ैद किया हुआ है लेकिन सिमरन के ज़रिए हम इन संस्कारों और विचारों की परतों को हटाने और मिटाने में लग जाते हैं जो हमारे बंधन का कारण हैं। हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी परमार्थी पत्र, भाग 2 में फ़रमाते

हैं कि संचित संस्कार हमें किस तरह क़ैद कर लेते हैं: “जब तक सभी संस्कार (जो तब से इकट्ठे हो रहे हैं जब से आत्मा मन और शरीर के देश में आयी है) मिट नहीं जाते, आत्मा आज़ाद नहीं होगी और तब तक कर्मों के अधीन रहेगी।”

इसी तरह, प्राचीन दार्शनिकों ने—जिन्हें ‘नीओप्लैटॉनिस्ट्स’ कहा जाता है जिन्होंने बाद में नॉस्टिसिज़्म, यहूदी कब्बाला, गूढ़ पश्चिमी परंपराओं और स्पिनोज़ा व कांत जैसे दार्शनिकों पर गहरा प्रभाव डाला—इन संचित संस्कारों को ‘आत्मा का वाहन’ कहा है। यह स्पष्ट रूप में वही दर्शाता है जो महाराज सावन सिंह जी ने भी फ़रमाया है: संस्कार ही आत्मा को निरंतर एक शरीर से दूसरे शरीर में ले जाते हैं बिलकुल वैसे ही जैसे एक वाहन हमें एक जगह से दूसरी जगह पर ले जाता है। महाराज सावन सिंह जी इसी पत्र में आगे लिखते हैं: “जो संस्कार हम अपने साथ इस जीवन में लाए हैं, वे हमारे भाग्य-कर्म हैं और हमें उन्हें भोगना ही होगा।” आप फ़रमाते हैं कि अगर इन संस्कारों को ख़त्म कर दिया जाए तो तुरंत मौत आ जाएगी। हालाँकि, इस वर्तमान जीवन में हम उन नए संस्कारों को इकट्ठा करने से बच सकते हैं जो भविष्य के जन्मों का कारण बनते हैं। दो तरह से ऐसा किया जा सकता है: पहला, नए कर्म करके “मन की मर्ज़ी से कर्म न करें, बल्कि खुद को गुरु का कारिन्दा या एजेंट समझते हुए कर्म करें। वफ़ादार कारिन्दा अमानत में ख़यानत नहीं करता और न ही ताक़त का नाजायज़ फ़ायदा उठाता है।” दूसरा, “संतजन हमें शब्द-धुन से जोड़ देते हैं। इस तरह वे हमें नए संस्कारों से आज़ाद कर देते हैं और साथ लाए गए संस्कार इस जीवन काल में ही भुगत लिए जाते हैं।”

एजेंट बनने, सिमरन करने और शब्द-धुन से जुड़ने के लिए ध्यान को निरंतर एकाग्र करना ज़रूरी है। दार्शनिकों का एक और समूह, जिन्हें ‘स्टोइक्स’ कहा जाता है, ग़लत संस्कारों को मिटाने के लिए ऐसा अभ्यास किया करता था जिसमें वह इन संस्कारों की ओर कोई ख़ास ध्यान नहीं देता था, इन्हें नकार देता था। इस समूह के लोग सजग होकर अपने ध्यान

को पक्का करते थे, इस बात को भली-भाँति जानते हुए कि हमारी जेल की दीवारें खामोशी में खड़ी होती हैं। इसलिए, वे अपने मन को ध्यान भटकानेवाले विचारों की ओर नहीं जाने देते थे और न ही उन पर मनन करने देते थे जो धुएँ के पर्दे की तरह हमारी नज़र को धुँधला करते हैं और हमें इस मायामय जगत में ही फँसाए रखते हैं। यही हमारी जेल की दीवारें हैं चाहे हमें उनका एहसास हो या न हो। महाराज सावन सिंह जी परमार्थी पत्र, भाग 2 में फ़रमाते हैं कि जब आत्मा शब्द-धुन को छोड़कर मन का साथ लेती है तो यह अपने ही किए हुए कर्मों में कैद होती जाती है।

भ्रम और झूठ की दीवारों ने हमें बहुत लंबे समय से बंदी बनाकर रखा हुआ है। अब हम अपने इन संस्कारों से हमेशा के लिए छुटकारा पा सकते हैं ताकि अब ये हमें हमारे द्वारा बनाई दीवारों के अंदर बंदी न बनाए रखें जो असल लगती हैं मगर हैं नहीं। आओ हम अभी से ही अपनी मुक्ति के एकमात्र साधन – सिमरन – से जुड़ जाएँ।

सिमरन मुक्ति के मार्ग पर आत्मा के सफ़र की शुरुआत है। जब हम ध्यान को पूरी तरह से अंदर एकाग्र करके सिमरन करते हैं तब हम तीसरे तिल पर पहुँच जाते हैं जहाँ शब्द-धुन हमारे कर्मों को नष्ट करके बंदीखाने की दीवारों को तोड़ देती है और हमारा मन अपने निज-घर – त्रिकुटी – लौटने के लिए आज़ाद हो जाता है। सुरत-शब्द मार्ग पर चलते हुए, सतगुरु की दया-मेहर और प्रेम की बंदौलत मन के पंजे से आज़ाद हुई आत्मा उनके नूरी स्वरूप के साथ वापस अपने मूल स्रोत परमात्मा में समाकर मुक्ति के आनंद को अनुभव करती है। फिर हमें कभी भी इस बात के लिए पछताना नहीं पड़ता जिसे कि कवि कैवाफी ने बहुत ख़ूबसूरती से बयान किया था: “जब वे दीवारें बना रहे थे तब किस तरह मेरा ध्यान इस ओर नहीं गया!”



सत्य क्या है?

जब मैं अपने लैपटॉप पर टाइप कर रही थी तो मुझे अपने फोन पर एक ई-मेल नोटिफिकेशन और फिर एक टेक्स्ट मैसेज की बीप सुनाई दी। उन्हें देखने के लिए मैंने फोन उठाया और फिर वापस अपने लैपटॉप स्क्रीन पर देखने लगी। थोड़ी देर बाद, ब्रेक लेने के लिए मैं सोशल मीडिया पर स्क्रॉल करने लगी। आधा घंटा कैसे बीत गया मुझे पता भी नहीं चला। जिन लोगों से मैं अपनी ज़िंदगी में कभी नहीं मिली, उनकी रील्स और कहानियों से ध्यान हटाकर जब मैंने ऊपर देखा तब मुझे एहसास हुआ कि मेरी छोटी बेटी मेरे बगल में बैठी थी और मुझे पता भी नहीं था।

हममें से ज़्यादातर लोग कभी न कभी खुद को ऐसी ही स्थिति में पाते हैं। अजनबी लोगों की ज़िंदगियों को देखते हुए और काम करना छोड़कर उसी स्क्रीन पर मैसेज का जवाब देते हुए मेरा ध्यान अपनी ही बेटी पर नहीं गया। मैं वर्चुअल रियलिटी में इतना खो गई कि मुझे उस इंसान के साथ का एहसास ही न रहा जिससे मैं बेहद प्यार करती हूँ और जो बिलकुल मेरे बगल में बैठी थी।

जैसे-जैसे हमारी दुनिया तकनीकी उन्नति की ओर तेज़ी से बढ़ रही है, हम खुद को ऐसी दुनिया में उलझा हुआ पाते हैं जो सच से कोसों दूर है। यहाँ तक कि इस लेख को लिखते समय भी, आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस ने मदद की पेशकश की। अगर हम अपने सभी कार्यों, अपने काम-काज और जीवन में टेक्नोलॉजी की मदद लेने लगे तो हमारी रचनात्मकता, हमारी सोचने-समझने की शक्ति का क्या होगा? हमारे दिमाग का क्या होगा, जिसे सुकून और सकारात्मक प्रेरणा दोनों की ज़रूरत है? और हमारे अस्तित्व के सामाजिक पहलू का क्या होगा जो इंसानों से नाता जोड़ना चाहता है।

बेशक, टेक्नोलॉजी के फ़ायदे, इसकी ज़रूरत और दूरगामी प्रभावों पर सवाल नहीं उठाए जा रहे। लेकिन इसे बदलाव कहें या क्रांति—इस सब के बीच खुद से ये सवाल करते रहना ज़रूरी है कि सत्य क्या है?

हमारी रूहानी खोज भी आखिर यही सवाल पूछती है। संत-महात्मा समझाते हैं कि हम भ्रम में जन्म लेते हैं, भ्रम में जीते हैं और भ्रम में ही मर जाते हैं। टेक्नोलॉजी और वर्चुअल रियलिटी को एक तरफ़ छोड़ दें तो भी हम सच्चाई से कोसों दूर हैं। लेकिन क्या हम सचमुच जीवन-भर माया की मीठी नींद में सोए रहना चाहते हैं, अपने असल मक़सद और अपने असल स्वरूप से बेख़बर रहकर सपनों को सच समझने की भूल करना चाहते हैं?

हमारे अंदर सत्य के लिए जो तड़प है, वह दरअसल हमारी आत्मा की अपने मूल स्रोत को जानने की तड़प है। सिर्फ़ भजन-सिमरन द्वारा ही हम उस सत्य को जान सकते हैं। संत-महात्मा समझाते हैं कि हर चीज़ भ्रम है। केवल 'शब्द' ही सत्य है।

संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि यह दुनिया, हमारे रिश्ते-नाते और यह शरीर जिसे हम इतना प्यार करते हैं सत्य की अनुभूति और परछाई-मात्र है। 'शब्द' ही असल सत्य है। यह परमात्मा की वह शक्ति है जो इस सृष्टि के कण-कण में समाई हुई है, जो इस पूरी सृष्टि को चलाती है और इसकी सँभाल करती है। दुविधा और विडंबना यह है कि भले ही शब्द सभी चीज़ों का सार है पर हम माया में इतने उलझे हुए हैं कि हमें इसका एहसास ही नहीं होता।

माया क्या है? जो सत्य प्रतीत होती है पर सत्य होती नहीं है। यह सिर्फ़ सत्य पर पड़ा पर्दा है या उसकी परछाई है। माया के इसी पर्दे की वजह से हम परिवर्तन और जुदाई का अनुभव करते हैं। हम अब वैसे नहीं हैं जैसे हम बचपन में थे और जैसे-जैसे हम बूढ़े होंगे हम अब वैसे नहीं रहेंगे और एक दिन हम मर जाएँगे। हमारे आस-पास की दुनिया हर पल बदलती है।

इसके विपरीत सत्य स्थायी, अविनाशी और पूर्ण है। हम इसी की खोज में हैं।

दाओ दे जिंग में हम इस सत्य-उस ऊर्जा या परमात्मा के शब्द के बारे में पढ़ते हैं जो सबमें व्याप्त है, जिसे प्राचीन चीनी संत 'दाओ' कहते थे:

दाओ छिपा हुआ है, अनामी है।

दाओ ही एकमात्र दाता है।

एक बार प्राप्त हो जाने पर यह अनन्त काल के लिए पर्याप्त है।

सतगुरु हमें इसी सत्य के बारे में समझाते हैं; दरअसल वह लगातार हमारे ध्यान को इस ओर खींचते हैं। वह हमें समझाते हैं कि जिंदगी के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी को समझते हुए यह फ़ैसला हमें करना है कि हमने अपने ध्यान को कहाँ लगाना है और मिली हुई साँसों की पूंजी को कहाँ खर्च करना है। क्या हम इस माया में और गहरे डूबना चाहेंगे या फिर हम सजग होकर सत्य तक पहुँचना चाहेंगे?

तुम ते सेव तुम ते जप तापा तुम ते ततु पछानिओ॥

गुरु अर्जुन देव जी, आदि ग्रंथ



स्मार्टफोन: उदासी का कारण?

राधास्वामी मत के संस्थापक स्वामी जी महाराज अपने सतगुरु के आगे विनती करते हैं:

मैं आतुर तुम्हें पुकारूं। चित में कोई और न धारूं॥
मेरा जीवन मूर अधारा।

सारबचन संग्रह

स्वामी जी महाराज भी वही समझा रहे हैं जो सभी संत-महात्मा समझाते आए हैं। हमारे अंदर परमात्मा से मिलाप के लिए तीव्र इच्छा और तड़प होनी चाहिए। हमें याद रखना चाहिए कि हमारा रखवाला कौन है, हमारा मार्गदर्शक कौन है, हमारा सच्चा साथी कौन है।

कोई भी रिश्ता सतगुरु के साथ हमारे रिश्ते से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण नहीं है। कोई भी कार्य इतना अहम नहीं है कि भजन-सिमरन करने के बजाय उसे पहल दी जाए क्योंकि वह समय हम अपने सतगुरु के लिए निकालते हैं। और जो चार वायदे हमने नामदान के समय किए थे उनसे ज़्यादा दृढ़ और जीवनदायक अन्य कोई वायदा नहीं है। हमें उम्मीद है कि किसी दिन हम भी कह पाएँगे, “चित में कोई और न धारूं॥”

लेकिन वर्तमान समय में एक अहम सवाल यह है, “अगर हमारा मन अंदर रूहानी सत्य पर पूरी तरह से एकाग्र न हुआ तो क्या होगा?” उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि हमारा बहुत ज़्यादा ध्यान हमारे स्मार्टफोन पर है? पत्रकार क्रिस हेस ने अपनी हाल ही में प्रकाशित किताब द सायरन्स कॉल में दुःख प्रकट करते हुए विस्तार से बताया है कि डिजिटल स्क्रीन हमारे मानसिक स्वास्थ्य और हमारी आत्मिक सुख-शांति दोनों के लिए कितना घातक बन गया है। किताब का उपशीर्षक है: हाउ अटेंशन बिकेम द वल्ड्स मोस्ट एंडेंजर्ड रिसोर्स।

सच तो यह है कि ध्यान हमेशा से हमारी सबसे क्रीमती संपदा रहा है। 19वीं सदी के दार्शनिक विलियम जेम्स जो कि स्वामी जी महाराज के समकालीन थे, ने ध्यान को इस तरह परिभाषित किया है, “मन का... एक ही समय में एक साथ संभव कई वस्तुओं या विचारों की श्रृंखला में से किसी एक पर टिक जाना।” उन्होंने लिखा कि ध्यान का अर्थ असल में चेतना की एकाग्रता है, जिसका अर्थ है “कुछ चीज़ों को अच्छी तरह से करने के लिए दूसरी चीज़ों से पीछे हट जाना।”

हमारे भजन-सिमरन के अभ्यास के लिए भी यह परिभाषा काफ़ी उपयुक्त है। हम (सिमरन के ज़रिए) अपनी सुरत को केंद्रित करने और एकाग्र करने की कोशिश करते हैं। हम इस दुनिया में फैले हुए अपने ख़याल को इकट्ठा करने की कोशिश करते हैं ताकि अपने भीतर कुछ श्रेष्ठ और अद्भुत अनुभव प्राप्त कर सकें।

हमारे ध्यान के भटकने का क्या कारण है? बहुत-सी चीज़ें हैं। मगर आजकल ये हमारे सेल फोन हो सकते हैं जिन्हें कॉमेडियन हसन मिन्हाज ने “रेक्टिंगल्स ऑफ़ सैडनेस” कहा है। उदासी के ही क्यों? क्योंकि स्मार्टफोन को लत लगा देने के लिए बनाया गया है ताकि हमें दूसरों से अलग-थलग किया जा सके; ताकि हम में परस्पर प्रेम और मधुर संबंध क़ायम न हो पाएँ और हमारे मन की बेचैनी और चंचलता को बढ़ाया जा सके। हेस हमें बताते हैं कि ये फोन फास्ट फूड के समान हैं जो सिर्फ़ कैलोरी देते हैं लेकिन असल में पोषण नहीं देते।

हेस बताते हैं कि किस तरह हमारे डिजिटल उपकरणों का लगातार विकास हो रहा है और उन्हें बेहतर बनाया जा रहा है। “दुनिया की सबसे बड़ी कंपनियाँ, सबसे तेज़ दिमाग़ और सबसे शक्तिशाली संस्थाएँ बहुत सारा रुपया-पैसा ख़र्च करती हैं ताकि हमें वह सब देखने और सुनने के लिए मजबूर किया जा सके जो वे हमें दिखाना या सुनाना चाहती हैं।”

लेखक स्मार्टफोन को “हमारी जेब में पड़ी छोटी स्लॉट मशीनें*...” कहता है। ये मशीनें दिन में 24 घंटे उपलब्ध रहती हैं। ये ताज़ा ख़बरों और मनोरंजन करने के लिए बेशुमार स्क्रॉल का मौक़ा देती हैं। ये हमें बहुत अधिक चौकन्ना रखती हैं और मनोरंजन के लिए कई तरह के विकल्प देकर हमारे ध्यान को लगातार भटकाए रखती हैं। लेकिन हेस लिखते हैं, “हमारे लिए जितना ज़्यादा मनोरंजन उपलब्ध रहता है, हम उतना ही ज़्यादा मनोरंजन चाहते हैं।” और इससे भी बदतर यह है कि हमारे फोन हमें उत्तेजित करने और लोगों का ध्यान अपनी तरफ़ खींचने के लिए “लाइक”, तुरंत जबाव और प्रशंसा पाने के लिए उकसाते हैं। मोबाइल हमारे अहंकार को बढ़ाने के अलावा कुछ नहीं करते।

हेस अपनी किताब का समापन करते हुए कहते हैं कि हमें इस बात पर सोच-विचार करना चाहिए कि हम कहते क्या हैं, चाहते क्या हैं और करते क्या हैं? सतगुरु भी हमसे यही सवाल पूछते हैं। क्या हमारा ध्यान अंतर में सिमरन और भजन की ओर है या दुनियावी शक्तों-पदार्थों में लगातार बाहर भटक रहा है? सेलफोन सिर्फ़ सबसे नया साधन है जिसके ज़रिए मन हमें परम सत्य से दूर ले जाने के लिए बहकाता है।

स्वामी जी महाराज के ऊपर दिए गए शब्द की अगली पंक्तियाँ हमारी दुविधा पर प्रकाश डालती हैं। 19वीं सदी के अंत में स्वामी जी महाराज द्वारा लिखा गया यह शब्द तब भी सच था और आज भी सच है:

भौसागर वार न पारा। डूबे सब उसकी धारा॥

है मिथ्या झूठ पसारा। धोखे को सच सा धारा॥

सारबचन संग्रह

और फिर आप इस समस्या का समाधान बताते हैं:

* सिक्के डालकर चलनेवाली मशीनें जो आमतौर पर कसीनो, गेमिंग ज़ोन और क्लबों में पाई जाती हैं।

सतगुरु बिन धोख न जाई। बिन शब्द सुरत भरमाई॥
या ते तुम सरना ताकूँ।

सारबचन संग्रह

अपना हाले-दिल तुझे सुनाने की
आरजू है मुझे,
अपने खोए हुए दिल का हाल फिर सुनने की
आरजू है मुझे।

मेरी फुजूल की चाहत तो देख
कि जिस क्रिस्से का पर्दाफ़ाश हो चुका,
उसे रक़ीबों* से छुपाने की
आरजू है मुझे।

वह शब-ए-क़द्र† की बेशक़ीमती
और अज़ीज़ रात
सुबह तक तेरे साथ गुज़ारने की
आरजू है मुझे।

वाह कि ऐसा नाजुक
मोती का दाना
रात की सियाही में पिरो लेने की
आरजू है मुझे।

ऐ सबा, आज की रात
मुझ पर मदद फ़रमा
कि सुबह होने से पहले खिल उठने की
आरजू है मुझे।...

हाफ़िज़, बुलबुल-ए शिराज़, ग़ज़ल 42

* दावेदारों।

† इस्लाम में इस रात की इबादत का बड़ा पुण्य माना जाता है।

सफ़ेद सूती कुर्ता पजामा

उन्होंने सफ़ेद सूती कुर्ता पजामा पहना हुआ था।

सूरज की रोशनी को उनसे प्यार हो गया

बिलकुल वैसे ही जैसे हमें हुआ था...

और वह उनके पीछे-पीछे चलने लगी

महज़ इस ख़ुशी के लिए

कि उनके कंधों पर चमक सके

और उनकी बाजुओं से होते हुए नीचे तक आ जाए।

सफ़ेद कुर्ता पजामा

चकाचौंध करने वाली रोशनी में चमक रहा था

जब वह हमारी तरफ़ आ रहे थे।

बस एक सादा-सा इन्सान

सफ़ेद सूती कपड़े पहने

जो इस दुनिया के तपते रेगिस्तान में

हरी-भरी जगह की तरह था,

रहमत की शीतल हवा की तरह था।

वह शब्द की धारा के साथ एक रूप था

जो आत्माओं को वापस उनके स्रोत तक ले जाती है।

वह निर्मल नूर ही था

जो इस धूल-भरी दुनिया में चमक रहा था।

हवा में उनका ही प्यार रचा-बसा था!

वह अपनी सफ़ेद बेंत की कुर्सी पर बैठ गए हैं,

पुराने छायादार पेड़ के नीचे,

उनका कुर्ता पजामा हवा में धीरे-धीरे लहराता हुआ चमक रहा है

सुनहरी रोशनी और हल्के बैंगनी रंग की छटा में।

वह अपने सेवादारों को सेवा करते हुए देखते हैं,
फिर मुझ पर, जो पास ही बैठी थी, दृष्टि डालते हैं।

जल्दी से! अपनी नज़रें हटा लो!

वरना तुम अपना सब कुछ खो दोगी!

पहले ही बहुत देर हो चुकी है!

इतनी अपार जानलेवा सुंदरता

मेरे वुजूद के दरवाज़े को तोड़कर

मेरे अंदर से एकमात्र चीज़ को चुरा लेती है

जो सांस लेती है।

बहुत ही जल्द!

सूरज छिप जाता है

पुराने छायादार पेड़ के पीछे।

बहुत जल्दी!

सफ़ेद सूती कपड़े पहने

वह सादा-सा इनसान

खड़ा होता है, फिर दूर चला जाता है,

मुझे अकेला छोड़कर

अपनी छाया में।

परम आनंद से भरपूर शानदार पल

आँसुओं में घुल जाते हैं

जो बहते चले जाते हैं...

जीवन-भर

प्यार से सराबोर,

कड़वी-मीठी

कसक के साथ।



सेवा का असली मक़सद

ज़रा सोचिए: हम पूरी ज़िंदगी कड़ी मेहनत करते हैं और एक खाते में पैसे जमा करते हैं ताकि रिटायर होने पर या जब सच में ज़रूरत हो तब हम उसका इस्तेमाल कर सकें। वह दिन आता है, हम बैंक जाते हैं और हमें बताया जाता है कि हमने अपना पैसा ग़लत खाते में जमा कर दिया है। हमें पता चलता है कि हमारे पास कुछ नहीं है – जो कुछ हमने जमा किया था वह अब किसी और का है।

इससे हमें बहुत बड़ा सदमा पहुँचेगा। देखा जाए तो हमारी हालत भी बिलकुल वैसी ही है। हर रोज़, दिन-प्रतिदिन, हम अपने परिवार, घर-बार, नौकरी, कर्मचारियों, मालिकों, बच्चों, माता-पिता आदि की देखभाल करने के लिए कितनी सख्त मेहनत करते हैं। लेकिन जो कुछ हमने इतनी मेहनत से इकट्ठा किया वह हमारे साथ नहीं जा सकता और इससे हम आत्मिक सुख प्राप्त नहीं कर सकते।

दूसरी तरफ़, अगर हम अपना जीवन परमपिता परमात्मा और अपने सतगुरु को समर्पित कर दें तो हमारी पूरी ज़िंदगी सेवा बन जाती है और हर पल, हमारे द्वारा की गई छोटी से छोटी कोशिश हमारे खाते में जमा हो जाती है जो हमें रूहानी व जज़्बाती तौर पर तथा हर तरह से बेहतर बनाती है।

हमें बताया जाता है कि कहीं भी, कभी भी की गई निस्स्वार्थ सेवा ही असल सेवा है। सत्संग-घर या किसी ख़ास संस्थान में जाकर सेवा करना ही सेवा नहीं है। अहम यह है कि सेवा निस्स्वार्थ भाव से की जाए। जब कोई भी कार्य निस्स्वार्थ होकर, बिना किसी मेहनताने के, बिना कोई उम्मीद रखे या यहाँ तक कि प्रशंसा की चाहत के बिना किया जाता है तब वह सेवा बन जाता है। स्वेच्छा से देना हमारे जीवन का हिस्सा बन जाता है।

कबीर साहिब कहते हैं:

देह धरे का गुन यही, देह देह कछु देह।
बहुरि न देही पाइये, अब की देह सो देह॥
संत कबीर

प्रेम देने में है, लेने में नहीं; प्रेम खोने में है, पाने में नहीं। हम उम्मीद करते हैं कि सेवा द्वारा हमारा अहंकार ख़त्म हो जाए। पहले हम सोचते हैं कि सेवा के लिए हमारी ज़रूरत है लेकिन जितनी ज़्यादा सेवा हम करते हैं उतना ही हमें एहसास होता है कि सेवा की ज़रूरत हमें है। सतगुरु दुनिया-भर में इतनी सारी इमारतें बनवा कर, इतनी सारी किताबें छपवा कर, इतने सारे प्रोजेक्टों द्वारा सेवा करने का मौक़ा दे रहे हैं। ये सब तो बस एक बहाना है ताकि हम निस्स्वार्थ भाव से कुछ ऐसा कर पाएँ जिससे हमें परमात्मा की ख़ुशी प्राप्त हो सके।

सेवा दो क्रिस्म की है: बाहरी सेवा जो ज़रिया है और आंतरिक सेवा जो लक्ष्य है। संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि सबसे उत्तम क्रिस्म की निस्स्वार्थ सेवा भजन-सिमरन है यानी कि अपनी सुरत को तीसरे तिल पर ले जाना और उसे अंदर दिव्य प्रकाश और शब्द-धुन से जोड़ना। वही सतगुरु की सबसे ऊँची और सच्ची सेवा है। बाक़ी सभी सेवाएँ उस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए ज़रिया मात्र हैं।

सेवा का मक़सद मन को परमात्मा की ओर मोड़ना है। इसके लिए कायापलट करने और ख़याल को बाहर से अंदर की ओर ले जाने की ज़रूरत होती है। सेवा इस अहम यू-टर्न को लेने में मन की मदद करती है। यह धीरे-धीरे मन को परमात्मा के प्यार से सराबोर कर देती है, मन को निर्मल और पवित्र करती है और इसे दिव्य शब्द से जुड़ने के क़ाबिल बनाती है। इसीलिए कबीर साहिब कहते हैं:

भक्ति दान मोहिं दीजिये, गुरु देवन के देव।
और नहीं कछु चाहिये, निसु दिन तेरी सेव॥

आर.एस.एस.बी. की वेबसाइट पर “निस्स्वार्थ सेवा” वीडियो में, कई सेवादारों से पूछा गया कि सेवा उनके लिए क्या मायने रखती है। उन सभी ने अलग-अलग तरह से एक ही बात कही: सेवा उनके जीवन का आधार है, आसरा है। सेवा उन्हें याद दिलाती है कि उनके सतगुरु हमेशा उनके अंग-संग हैं; यह उन्हें जीवन के उतार-चढ़ाव के दौरान मज़बूती से थामे रखती है। अगर हम सही नज़रिए से सेवा करते हैं तो यह हमें सतगुरु और हमारे असल स्वरूप से जोड़ती है और यह हमारे मन में ऐसा बदलाव ले आती है कि वह धीरे-धीरे भजन-सिमरन में बाधा डालना कम कर देता है।

संत-सतगुरुओं ने हमें समझाया है कि हम सब एक ही जंजीर की कड़ियाँ हैं यानी कि हम सब समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। खाना बनाने की सेवा में लगा सेवादार भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि कोई प्रोजेक्ट मैनेजर। कोई सेवादार बड़ा या छोटा नहीं होता, कोई सेवा बड़ी या छोटी नहीं होती। हर काम, हर व्यक्ति सेवा नामक इस इनसानी जंजीर में एक ज़रूरी कड़ी है। हालाँकि इस जंजीर में शामिल लोगों को बदला जा सकता है लेकिन यह जंजीर स्थायी है और इसकी कड़ियाँ आपस में जुड़ी रहती हैं। कहा जाता है कि हम सेवा नहीं करते बल्कि सेवा हमसे करवाई जाती है।

इन सब से बढ़कर, सेवा-सतगुरु के लिए हमारे और हमारे लिए सतगुरु के प्यार की अभिव्यक्ति है। जब 1930 के दशक में डेरा में सत्संग-घर बनाया जा रहा था तब दिल्ली के एक जाने-माने अमीर ठेकेदार ने अर्ज़ की कि पूरी इमारत बनाने की सेवा उसे सौंप दी जाए। बड़े महाराज जी ने जवाब दिया:

मैं चाहता हूँ कि ग़रीब से ग़रीब सत्संगी को भी सेवा का मौक़ा मिले, चाहे वह सिर्फ़ एक रुपया दे या आठ आने। मैं चाहता हूँ कि हर सत्संगी, चाहे वह अमीर हो या ग़रीब, जवान हो या बूढ़ा, सत्संग-घर बनाने की सेवा

में हाथ बँटाए; चाहे वह केवल मुट्ठी-भर मिट्टी या ईंट के कुछ टुकड़े ही उठाए। संगत द्वारा की गई छोटी से छोटी सेवा मेरे लिए क्रीमती है, उनके द्वारा बहाई गई पसीने की हर बूँद अनमोल है। यह प्रेम और भक्ति-भाव से की गई सेवा है।

अनमोल खज़ाना

कहा जाता है कि एक अच्छा सेवादर वह होता है जो सबके साथ काम कर सके। सेवा सिर्फ़ मशीनी ढंग से काम करना नहीं है; यह किसी की खुशी प्राप्त करने की इच्छा है, किसी को खुश करना है। जब हम किसी को खुश करते हैं तब हम सतगुरु को खुश करते हैं और ऐसे सकारात्मक माहौल में हम शांत मन से अपना भजन-सिमरन कर सकते हैं और हम सतगुरु को अपने अंग-संग महसूस कर पाते हैं। जैसा कि दादू दयाल कहते हैं: “आगै पीछे सँगि रहै, आप उठाये भार।”



एक वृद्ध सेवादार का क़बूल करना

हममें से कुछ लोगों का सेवा के प्रति मिला-जुला दृष्टिकोण है। हम सेवा करना चाहते हैं लेकिन कभी-कभी हममें वैसा उत्साह नहीं होता जैसा जवानी में हुआ करता था। बेशक़ अहंकारी व्यक्ति के लिए सेवा करना मुश्किल होता है लेकिन अगर आप उम्र के एक ख़ास पड़ाव पर हैं तो यह शारीरिक तौर पर भी मुश्किल हो सकता है। हम में से कुछ लोग जो दशकों से सेवा कर रहे हैं, साठ या सत्तर साल की उम्र में शारीरिक रूप से थकने लगते हैं और युवा सेवादारों को सेवा करते देखकर उन्हें हैरानी होने लगती है। उन्हें अपने वे दिन याद आ जाते हैं जब वे भी पूरी रात सेवा करने के बाद अगले दिन बिना किसी परेशानी के काम-काज पर जाकर आराम से काम किया करते थे। प्यार, जोश और जवानी के बल पर वे कठिन से कठिन सेवा भी कर पाए।

अब वे देखते हैं कि उनसे युवा सेवादार कैसे सामान खींचते हैं, उसे उठाते हैं, हथौड़ा चलाते हैं, आरी चलाते हैं और आम तौर पर सुबह से शाम तक (या उसके बाद भी) इधर-उधर दौड़ते हुए सेवा में लगे रहते हैं। वे सेवादार कई दिनों तक कई-कई घंटे सेवा करने में सक्षम होते हैं। और आर.एस.एस.बी. की वेबसाइट पर उपलब्ध सेवा पर बनी फिल्मों में उन सभी वृद्ध सेवादारनियों की तो बात ही क्या, जो अत्यधिक गर्मी के मौसम में गर्म लोहों पर रोटियाँ बनाती हैं, सोलह साल की लड़कियों की तरह बैठकर रास्तों और सड़कों पर पड़े पत्ते बुहारती हैं या खुशी-खुशी और बेफ़िक़्री से ईंटें तोड़ती हैं?

क्या हम वृद्ध लोग सिर्फ़ आलसी बन रहे हैं? शायद हमें सतगुरु से या परमात्मा न करे संतमत से प्यार नहीं है? हमें 1960 और 70 के दशक के डेरा के पुराने सेवादार याद हैं: वे इतने बुद्धिमान और प्रेमी थे कि उन्हें देखकर हमें लगता था कि हम कभी भी उन जैसे नहीं बन पाएँगे। उनमें से कुछ ने अपने सतगुरु बड़े महाराज सावन सिंह जी के बिछुड़ने के दुःख को सहा था और फिर उन्होंने महाराज जगत सिंह जी, महाराज चरन सिंह जी और यहाँ

तक कि बाबा जी के लिए भी सेवा की। ज़रा सोचिए, चार सतगुरुओं की सेवा करना! हुज़ूर महाराज जी प्रोफ़ेसर भटनागर को हँसकर यह कहा करते थे कि मौत ही एकमात्र सेवानिवृत्ति है। और हुज़ूर महाराज जी के बारे में यह सच साबित हुआ और जल्द ही प्रोफ़ेसर भटनागर के लिए भी।

हम जैसे वृद्ध हो चुके सेवादार अकसर उन दिनों को याद करते हैं जब हम भी इन युवा सेवादारों की तरह ही उत्साह और ऊर्जा से भरे थे। हममें से कुछ ने उस ज़बरदस्त उत्साह को क्रायम रखा है और जितनी भी सेवा मिलती है उसे सँभाल लेते हैं उस कलाबाज़ की तरह जो एक रिंग से दूसरी रिंग पर झूलता रहता है। हममें से कुछ लोगों को स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं और बीमारियों से जूझना पड़ा जिनकी वजह से हम अपनी सेवा जारी नहीं रख पाए या पहले से बहुत कम सेवा कर पा रहे हैं। हममें से कुछ लोगों को बढ़ती उम्र की वजह से या दूसरों को वह मौक़ा देने के लिए उन सेवाओं से हटा दिया गया जिन्हें निभाकर हमने कई वर्षों तक आनंद लिया।

वेल्श कवि डायलन थॉमस ने कहा था: “रात होने से पहले सुख की नींद मत सो जाओ... प्रकाश के मंद होने से पहले जो कर सकते हो, करो।” लेकिन संतमत के अनुयायी होने के नाते हमें इसके बजाय अपने भजन-सिंमरन में “हर रोज़ मरने”, अपने जीवन को सच्चे दिल से संतमत के उपदेश के अनुसार ढालने के लिए कहा जाता है ताकि हम खुद को भ्रम और जन्म व मृत्यु के इस दुखदायी चक्र से मुक्त करके अपने भीतर के प्रकाश का अनुभव कर सकें। उस प्रकाश के प्रकट होने पर मन शांत हो जाता है; सिर्फ़ प्रेम ही रह जाता है।

जैसे-जैसे हम इस मार्ग पर आगे बढ़ते हैं, असल में हम धीरे-धीरे उस “सुखद नींद” की ओर बढ़ते जा रहे हैं। हम धीरे-धीरे बहुत-से भ्रमों से बाहर निकल रहे हैं: कि हम हमेशा जीवित रहेंगे, कि हम इस द्वैत की दुनिया में सच्चा सुख हासिल कर सकते हैं, कि हम अपने सपनों और इच्छाओं को पूरा कर सकते हैं, कि हमारा जीवन हमारी उम्मीदों के मुताबिक़ होगा हमारे कर्मों के अनुसार नहीं, कि हम महत्त्वपूर्ण हैं इत्यादि। कहा जाता है

कि सिमरन हमारे जन्म-जन्मांतरों के कर्मों के हिसाब-किताब को चुकता कर देता है और इसलिए हर बार सिमरन करके हम अपने कर्मों के बहुत बड़े लेखों को धीरे-धीरे खत्म कर रहे हैं। हमें एहसास हो रहा है कि हम इस मुक्ति के मार्ग पर हैं। रूहानी तौर पर हम शायद वहाँ न पहुँच पाएँ हों जहाँ हम पहुँचना चाहते थे लेकिन हम निश्चित रूप से वहाँ भी नहीं हैं जहाँ हम पहले थे। ठोकरें खाने, लड़खड़ाने और कभी-कभी बुरे रवैये के बावजूद, हमारी दिशा साधारणतया अंदर और ऊपर की ओर होती है।

जैसा कि हुजूर महाराज जी ने अपने एक शिष्य को लिखा था: उन सभी चीज़ों को छोड़ देना जिनसे हमने कभी प्यार किया और जिनके लिए हम जिए, शायद इतना भी बुरा नहीं है। हमें समझाया जाता है कि पानी से भरे गिलास में चाय डालने के लिए पहले उस गिलास में पड़े पानी को गिराना पड़ता है। वास्तव में हमें हमारी सभी मलिनताओं-तृष्णाओं, कर्मों, धारणाओं, भ्रमों-से मुक्त किया जा रहा है ताकि हमें सतगुरु, परमपिता परमात्मा और शब्द के प्रेम से भर दिया जाए। जन्म-जन्मांतर से इकट्ठी की गई अज्ञानता की उन सभी परतों को हटाया जा रहा है ताकि हम अपने अहंकार को छोड़कर प्रकाश से भर जाएँ-हमें अपने अंदर शब्द-स्वरूप में मौजूद सतगुरु का बोध हो सके।

भले ही हमारा शरीर वृद्ध हो रहा है और इसमें आश्चर्यजनक और अजीब बदलाव आ रहे हैं जो वृद्ध हो रहे शरीर में आते हैं-लेकिन हमारी आत्मा जवान हो रही है। हमारा शारीरिक बल, स्टैमिना और चुस्ती-फुर्ती कम हो सकती है लेकिन सतगुरु की दया-मेहर से जीवन-भर की सेवा, सत्संग और भजन-सिमरन हमें रूहानी तौर पर परिपक्व कर देता है जिससे हमें उस दिव्य प्रकाश और प्रेम के स्रोत में समा जाने में मदद मिलती है जो अनंत जन्मों से हमारे इंतज़ार में है। अब हम उन युवा सेवादारों की प्रशंसा कर सकते हैं जो इतनी मेहनत कर रहे हैं तथा उनके और सतगुरु के प्रति आभारी हो सकते हैं जिनकी वजह से हम सुख की नींद सो सकते हैं।



प्यार का निमंत्रण

शब्द “धुनात्मक प्रकाश” है, आवाज़ और प्रकाश का संगम है। यह रूहानी शक्ति की धारा है जोकि सतगुरु का असल स्वरूप है। पूर्ण सतगुरु का सबसे अहम कर्तव्य आत्माओं को शब्द से जोड़कर उनका मार्गदर्शन करके उन्हें उनके निज-घर परमात्मा के पास वापस ले जाना है। इस संसार में संत-सतगुरुओं का होना ही इस बात का सबूत है कि परमात्मा का अस्तित्व है। संत सच्ची विनम्रता, प्रेम और दया-मेहर की साकार मूरत होते हैं। हमें इस दुनिया के स्वप्न से जगाने के लिए परमात्मा उन्हें इस सृष्टि में भेजता है। तभी आत्मा मुक्ति प्राप्त कर सकती है और अपने असल मक़सद को पूरा कर सकती है।

सतगुरु के साथ हमारा रिश्ता हमारी भजन-बंदगी का मरकज़ है। चाहे हमें समझाया जाता है कि हमारा सच्चा गुरु शब्द है लेकिन यह रिश्ता सतगुरु के देहस्वरूप से शुरू होता है। हम सिर्फ़ उसी से प्यार कर सकते हैं जो हमारे स्तर पर देहस्वरूप में मौजूद हो। हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी बहुत स्पष्ट लफ़्ज़ों में फ़रमाते हैं:

अगर हम सीधे परमात्मा की भक्ति कर सकते तो हमें सतगुरु की बिलकुल ज़रूरत न होती। लेकिन अगर हमने उसे देखा ही नहीं है तो हम सीधे परमात्मा की भक्ति नहीं कर सकते। इसलिये हमें किसी गुरु या संत-महात्मा की ज़रूरत होती है जो हमारे स्तर पर हो, हमारे जैसा हो, जो अपने प्रेम और भक्ति से हम पर प्रभाव डाल सके, जो हमें वह रास्ता दिखा सके जो परमात्मा की ओर वापस ले जाता है।

संत संवाद, भाग 1

हर जगह और हर समय में हुए संत-महात्माओं ने हमारे ध्यान को हमेशा शब्द गुरु की ओर मोड़ने की कोशिश की है। सतगुरु हमें बार-बार समझाते हैं कि जिस सुख की हमें तलाश है, वह इस अस्थायी, परिवर्तनशील संसार में कभी नहीं मिल सकता। संत-महात्मा हमें सदा अंदर की ओर रुख करने

के लिए प्रेरित करते हैं। सतगुरु और शिष्य के बीच प्यार का रिश्ता होता है, ऐसा प्यार जो देहस्वरूप से शुरू होकर सभी बाधाओं को पार करते हुए रूहानी प्यार में तब्दील होकर पूर्ण होता है। बड़े महाराज जी ने इसे बहुत ही खूबसूरती से पेश किया है:

सतगुरु हमें भवसागर से पार ले जानेवाले पुल के समान हैं। सच्चे सतगुरु के प्रेम द्वारा हमारे अंदर उस निराकार और अकथ प्रभु का प्रेम पैदा हो जाता है।
प्रेम की विरासत

देहधारी सतगुरु के पास वह युक्ति है जिससे हम अंदर परमात्मा और शब्द से जुड़ सकते हैं। हमारी आत्मा के घर वापसी के सफ़र के लिए देहधारी सतगुरु का होना बहुत ज़रूरी है। हमें किसी ऐसे गुरु की आवश्यकता है जिसे हम देख सकें और सुन सकें, कोई ऐसा जिस पर हम भरोसा कर सकें; जिससे हम प्यार और भक्ति सीख सकें जो आखिरकार हमें शब्द से जोड़कर वापस परमपिता परमात्मा के पास ले जाएगी। हम अपनी बात देहस्वरूप सतगुरु की चर्चा से शुरू करते हैं और हमें पता ही नहीं चलता कि हम कब शब्द के बारे में बात करने लग जाते हैं।

अपने अंतर में शब्द के लिए प्यार और भक्ति पैदा करना हमें शायद अपने बस से बाहर की बात लगे। लेकिन सतगुरु हमें भजन-सिमरन के अभ्यास की युक्ति सिखाते हैं, साथ ही शाकाहारी भोजन अपनाने-जिसमें दूध और दूध से बने पदार्थ भी शामिल हैं; शराब और मादक पदार्थों से परहेज़ करने और उच्च नैतिक जीवन जीने की हिदायत देते हैं और यह सब रोज़ाना भजन-सिमरन करने के हमारे चौथे वायदे को पूरा करने में मदद करते हैं। सबसे अहम बात यह है कि उनकी दया-मेहर से हम भजन-सिमरन द्वारा परमात्मा से मिलाप के मक़सद को पूरा करने के लिए लगातार कोशिश करते हैं। यही उनका सबसे बड़ा चमत्कार है।

सतगुरु से पूछे जाने वाले अधिकतर सवालों के जवाब, चाहे वे सवाल परमार्थी हों या दुनियावी, भजन-सिमरन पर आकर ही ख़त्म होते हैं। ऐसा

लगाता है कि भजन-सिमरन करते रहने से किसी भी तरह के हालात का सामना बेहतर ढंग से किया जा सकता है चाहे वे हालात कितने ही मुश्किल क्यों न हों। चूँकि बहुत-से सत्संगियों को भजन-सिमरन के दौरान बहुत संघर्ष करना पड़ता है, संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि हमारा अड़ियल मन आसानी से वश में आने के लिए तैयार नहीं है। इस मन से जूझते हुए अपने फैले हुए खयाल को तीसरे तिल पर एकाग्र करने का एकमात्र तरीका भजन-सिमरन है। इस संघर्ष के बावजूद, सतगुरु हमें भजन-सिमरन करते रहने की नसीहत देते हैं। हुजूर महाराज चरन सिंह जी प्रेम की विरासत पुस्तक में, भजन-सिमरन करने के महत्त्व के बारे समझाते हुए फ़रमाते हैं, “सतगुरु को भेंट किया जानेवाला सर्वश्रेष्ठ उपहार भजन-सिमरन है, दूसरी किसी वस्तु का कोई महत्त्व नहीं।”

भजन-सिमरन के ज़रिए, सतगुरु हमें निरंतर बरस रही दया-मेहर का एहसास करवाते हैं, वह हम पर अपनी मेहर-भरी दृष्टि बनाए रखते हैं तथा हमें दया-मेहर को सँभालने के लायक बना देते हैं। हम उनकी अनंत और अपार दया-मेहर को देखकर दंग रह जाते हैं। सतगुरु ही शिष्य के हृदय में प्रेम का बीज बोते हैं। फिर वह खुद ही प्रेम के इस बीज का पोषण करते हैं जिससे शिष्य के हृदय में परमात्मा से मिलाप की इच्छा और लगन पैदा होती है। भजन-सिमरन ही उनकी सहायता और दया-मेहर को प्राप्त करने का एकमात्र ज़रिया है इसलिए भजन-सिमरन करना बहुत ज़रूरी है।

परमात्मा की दया-मेहर से प्राप्त होने वाले अनेक उपहारों में से एक उपहार ‘प्रेम’ है जो रूहानियत का सार है। बड़े महाराज जी पुस्तक डॉन ऑफ़ लाइट में फ़रमाते हैं:

उस सच्चे प्रियतम के लिये प्रेम पैदा करना रूहानी तरक्की के लिये सबसे अधिक ज़रूरी है। ...प्रेम की किरणें सारे वातावरण को प्रसन्नता से भर देती हैं। प्रेम में परमात्मा का नूर झलकता है। प्रभु-प्राप्ति का मार्ग, प्रेम का ही मार्ग है। ...प्रेम आत्मा को अकल्पनीय उत्साह से भर देता है जिससे वह उड़ कर अपने प्रियतम के पास पहुँच जाती है। इसीलिये प्रेम को सच्ची रूहानियत में सर्वोपरि माना गया है।..

प्रेम कैसे पैदा किया जा सकता है? सच्चे सतगुरु प्रेम का साकार रूप होते हैं। रूहानी प्रेम उनकी दात है, वह जिसे चाहे दे सकते हैं। यह दात क्यों, कहाँ, कब और कैसे देनी है, यह सतगुरु की मौज पर निर्भर है।

प्रेम पैदा करने का दूसरा तरीका है सतगुरु द्वारा समझाए गए सिमरन, ध्यान और भजन का अभ्यास करना। जितनी श्रद्धा और भक्ति के साथ हम भजन-सिमरन करेंगे, उतने ही शब्द या नाम के समीप आते जायेंगे जोकि प्रेम का ही दूसरा नाम है।

सतगुरु के पास ऐसी खास रूहानी शक्ति है कि वह जब चाहें, जिसे चाहें, प्रेम की यह दात बख्शा सकते हैं। उनकी दया-मेहर अनंत-अपार है और सात समन्दर पार भी पहुँच सकती है। प्रेम पैदा करने का दूसरा तरीका-उनके कहे अनुसार भजन-सिमरन करना-भी उन्हीं की दात और दया-मेहर है। यह निमंत्रण हमेशा के लिए है फिर चाहे हम कहीं से भी शुरुआत क्यों न करें। यह सफ़र उनके प्रेम से शुरू होता है और उनका प्रेम ही इस सफ़र की मंज़िल है।

सतगुरु के लिए अपने प्रेम और भक्ति को ज़ाहिर करने का सबसे उत्तम तरीका भजन-सिमरन है। जन्म और मृत्यु के इस बहुत बड़े बंदीखाने से निकलने का एकमात्र रास्ता भजन-सिमरन है। भजन-सिमरन ही आत्मा के अपने घर लौटने का एकमात्र ज़रिया है। भजन-सिमरन ही वह एकमात्र ज़रिया है जिससे हम शब्द से जुड़ सकते हैं जोकि इस जीवन का एकमात्र मक़सद है। जैसा कि हुज़ूर महाराज जी हमें समझाते हैं:

हमारा असली गुरु शब्द है, वह 'होली घोस्ट', वह स्पिरिट, वह लॉगॉस या शब्द जो हम सबके अंदर समाया हुआ है।...वही हमारा असली गुरु है।

संत संवाद, भाग 1



हमारा दिल बेचैन है

इनसानों में एक गहरी, कुदरती तड़प होती है जो सिर्फ परमात्मा के मिलाप से ही पूरी हो सकती है। यह बेचैनी किसी कमी की निशानी नहीं है बल्कि यह किसी ऊँचे मक़सद और परमात्मा से रिश्ता जोड़ने की ओर इशारा करती है। स्थिरता, शरण और रूहानी अनुभव हमें घर वापस ले जाते हैं। जैसा कि सेंट ऑगस्टीन ने चौथी सदी में अपनी आत्मकथा कन्फेशन्स में लिखा था: “हे प्रभु, आपने हमें अपने लिए बनाया है और हमारा दिल तब तक बेचैन रहता है जब तक वह वापस आप में विश्राम न पा ले।”

परमात्मा की खोज करनेवालों को अपने भीतर एक गहरी तड़प महसूस होती है जो आसानी से शांत नहीं होती। जब किसी इनसान को अपने अंदर बेचैनी और ज़िंदगी के गहरे मक़सद की खोज करने की ज़रूरत महसूस होती है तो यह इस बात का संकेत है कि वह उस अज्ञात सफ़र के लिए तैयार है; एक ऐसे सफ़र के लिए जो रहस्यमय है, शायद डरानेवाला है, निस्संदेह मुश्किल भी है मगर फिर भी हमें अपनी ओर आकर्षित करता है। इस खयाल को हक़ीक़त में बदलने के लिए, जिज्ञासु को अपनी बेचैनी को ज़रिया बनाकर अपना रुख अंदर की ओर मोड़कर अपने ध्यान को परमात्मा पर टिकाना चाहिए ताकि वह उससे मिलाप कर सके। यह आसान नहीं है क्योंकि परमात्मा एक रहस्य है।

हालाँकि इस रहस्यमय सफ़र के बारे में सबसे अच्छी बात यह है कि हमें इसके अंत के बारे में पता है: हम वापस अपने घर पहुँच जाएँगे। लेकिन इसमें समय लगता है और इसे अनुभव करने के लिए हमें इस रहस्यमय सफ़र पर निकलना पड़ता है। हमें परमात्मा से मिलाप के लिए प्रतिबद्ध होना पड़ता है और अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश करनी पड़ती है। यह तभी मुमकिन है जब हम संतमत का पालन करते हैं। हममें से ज़्यादातर लोगों के लिए रूहानी राज़ से पर्दा आसानी से या जल्दी नहीं उठाया जाता। इनसान

की फितरत ही ऐसी है कि यह परमात्मा के अस्तित्व पर संदेह करता है और सवाल उठाता है। वह आशा और निराशा से जूझता रहता है। क्या हम इस मौक़े का लाभ उठाने और रूहानी शक्ति के अस्तित्व में भरोसा करने के लिए तैयार हैं?

परमात्मा से फिर से मिलाप का यह सफ़र अकेले तय करना पड़ता है। प्यार, भरोसा और भक्ति इस सफ़र की बुनियाद है। यह कोई ऐसा सफ़र नहीं है जिसे मित्र-मंडली के साथ, दुनियावी सुख-सुविधाओं को भोगते हुए तय किया जाता है। हालाँकि इस सफ़र में हमें अकेलापन महसूस हो सकता है मगर समय के साथ हम जान जाते हैं कि हम कभी अकेले नहीं होते। जब कोई सच्चे दिल से खोज करता हुआ परमात्मा के क़ाबिल बन जाता है तब परमात्मा खुद ही प्रकट हो जाता है। लोग अकसर यह खोज इसलिए शुरू करते हैं क्योंकि वे दुनिया से असंतुष्ट, निराश और उचाट हो जाते हैं। हो सकता है कि हम दिल छोड़ चुके हों, हमने कुछ आँसू भी बहाए हों लेकिन हमें एक तड़प और कशिश महसूस होती है जिसे हम नज़रअंदाज़ नहीं कर पाते।

हमारा दिल बेचैन है फिर भी उम्मीद है कि रोज़मर्रा के इस संसार रूपी नाटक में हम जो कुछ अनुभव करते हैं हमें उससे कहीं ज़्यादा हासिल होगा। इस तैयारी और रोमांच के साथ, हम अंदर की तरफ़ रुख़ करके घर वापसी का लंबा सफ़र शुरू कर देते हैं। मगर जल्द ही हमें एहसास होता है कि परमात्मा की खोज का यह सफ़र इतना आसान नहीं है क्योंकि हम युगों-युगों से इस बाहरी दुनिया में भटक रहे हैं। हमें एक ऐसे मार्गदर्शक की ज़रूरत महसूस होती है जो खुद यह सफ़र तय कर चुका हो, एक ऐसा देहधारी सतगुरु जो हमें हमारे असल घर वापस ले जाने के क़ाबिल हो।

हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी हमें फ़िलॉसफ़ी ऑफ़ द मास्टर्स, वॉल्यूम 5 में बताते हैं:

परमार्थ का मार्ग बड़ा कठिन है और बिना गुरु के इस पर नहीं चला जा सकता।...इस मार्ग पर चलना तलवार की धार पर चलना है। यहाँ पग-पग पर ख़तरे हैं। इसलिए जो इनसान हक़ीक़त को जानना चाहता है या सच्चा ज्ञान पाना चाहता है और परमात्मा से मिलना चाहता है, उसे ऐसे पूर्ण सतगुरु की खोज करनी चाहिए जो इस मार्ग का वाक़िफ़कार हो।

हमें देहधारी सतगुरु की ज़रूरत इसलिए भी है क्योंकि संत-महात्मा मौत के रहस्य को जान चुके होते हैं। वे जानते हैं कि परमात्मा के साथ मिलाप कैसे करना है, इस शरीर में रहते हुए 'जीते-जी' कैसे मरना है। अगर हमारा मिलाप पूर्ण सतगुरु से हो चुका है तो मौत के समय वह हमारी सँभाल करते हैं। जब आत्मा के शरीर रूपी पिंजरे से मुक्त होने का समय आता है तो सतगुरु हमें पहले से ही इसके लिए तैयार कर चुके होते हैं ताकि हम फिर से जन्म और मृत्यु के चक्र में न फँसें।

सिर्फ़ चुनी हुई आत्माओं को मनुष्य जामे में परमात्मा की पहचान करने और निज-घर वापस जाने का मौक़ा मिलता है इसीलिए मनुष्य का जामा मिलना बहुत बड़ा सौभाग्य है। लेकिन पिछले जन्मों के कर्मों के कारण, हम कर्मों के महाजाल में फँसे हुए हैं। हम इस जाल के भीतर अलग-अलग योनियों में जन्म तो ले सकते हैं लेकिन परमात्मा की मदद के बिना हम इस जाल से बाहर नहीं निकल सकते। हो सकता है कि यह जाल बड़ा होता जाए और हमें यह भ्रम हो जाए कि हमारा अपनी ज़िंदगी पर कुछ नियंत्रण है। लेकिन क्या सच में ऐसा है? या हम सिर्फ़ भ्रम में हैं तथा और ज़्यादा कर्म इकट्ठे करते जा रहे हैं?

पूर्ण सतगुरु के मार्गदर्शन में अंदर की ओर रुख़ करके ही हम इस मायामय दुनिया के प्रभाव को कम कर सकते हैं। अगर हम उनके बताए मार्ग पर चलते हैं तो परमात्मा की मदद से हम धीरे-धीरे समर्पण करना सीखकर इस संसार के कर्म-जाल से मुक्त हो जाते हैं।

अंदरूनी सफ़र के लिए जीवन-भर प्रतिबद्ध रहना पड़ता है। जब हम शुरुआत करते हैं तब अकसर हमें कोई अंदाज़ा नहीं होता कि हम कहाँ जा रहे हैं या वहाँ कैसे पहुँचना है। हम मार्ग भूल चुके हैं। शिष्यों को भजन-सिमरन की युक्ति समझाकर मार्ग में आनेवाले पड़ावों के बारे में बताया जाता है। प्यार, सहारा और मार्गदर्शन देने के लिए सतगुरु हमेशा साथ होते हैं। हालाँकि इस मार्ग पर चलने के लिए हमें खयाल को भीतर मोड़ने की ज़रूरत होती है, हम अकेले नहीं हैं और सबसे महत्त्वपूर्ण बात हम अकेलापन महसूस नहीं करते। सतगुरु के साथ हमारा पवित्र रिश्ता उस एकांतमय माहौल को बनाए रखने में मदद करता है जो इस यात्रा के लिए ज़रूरी है। हालाँकि ऐसा लग सकता है कि आत्मा की मुक्ति के इस सफ़र पर हम अकेले हैं लेकिन भजन-सिमरन के एकांत के इन पलों में ही सतगुरु के साथ हमारा नाता मज़बूत हो रहा होता है। उन पर भरोसा रखते हुए, हम बिना किसी शर्त प्यार करना सीख जाते हैं जिससे परमात्मा तक वापस जाने का रास्ता खुल जाता है।

जब तक परमात्मा से मिलाप नहीं हो जाता, हमारा दिल यानी कि हमारी आत्मा बेचैन रहती है, परमात्मा की जुदाई में तड़पती रहती है। इस जुदाई और कमी के एहसास को ख़त्म करने का एकमात्र तरीक़ा अपने आप को उसके सुपुर्द कर देना और उसमें समा जाना है। सतगुरु हमें निज-घर वापस ले जाने की हर संभव कोशिश कर रहे हैं मगर हमें भी अपनी ज़िम्मेदारी निभानी चाहिए। हमें भजन-सिमरन करने की कोशिश करनी चाहिए और सतगुरु पर भरोसा रखना चाहिए ताकि हम सब कुछ उन पर छोड़कर उनके आगे समर्पण कर सकें। हमें अपनी ज़िंदगी का कायाकल्प करके बाहर के बजाय भीतर की ओर रुख़ करने की ज़रूरत है।

मार्ग पर चलते हुए हमारे मन में ये विचार आ सकते हैं: मैं क्या सीख रहा हूँ? क्या मैं कोई तरक्क़ी कर रहा हूँ? धीरे-धीरे हमें सतगुरु पर भरोसा होने लगता है। संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि हमें अपनी तरक्क़ी के बारे में चिंता नहीं करनी चाहिए। इसके बजाय वे हमें 'अभी से करनी करने

की' नसीहत देते हैं। हमें सही वक्रत का इंतज़ार ही नहीं करते रहना—हमें उनका कहा मानना है। नामदान मिल जाने पर, उपदेश का पालन करने से हम रूहानी तौर पर आगे बढ़ते जाते हैं। इस दुनिया की हर वस्तु नश्वर है, निराश करती है और साथ छोड़ देती है। हम सीख जाते हैं कि अगर हम इस संसार और जन्म-मरण के कभी न ख़त्म होनेवाले चक्र से मुक्त होना चाहते हैं तो इस दुनिया में करने लायक़ एक ही काम है और वह है हमारा रूहानी अभ्यास जोकि सच्चा और स्थायी है। इस दुनिया में कुछ भी सदा रहनेवाला नहीं है। इस शरीर के बिना हमारी कोई पहचान नहीं है, हमारा यहाँ पर कोई अस्तित्व नहीं है। जन्म और मृत्यु दो ऐसी घटनाएँ हैं जो हर इन्सान के साथ घटती हैं। हम इस संसार में जन्म लेते हैं और कुछ समय बाद यहाँ से चले जाते हैं। अहमियत इस बात की है कि हम जन्म और मृत्यु के बीच क्या करते हैं। क्या हम बिना किसी मक़सद के भटकते रहते हैं या हम अपनी आंतरिक चेतना, अपनी आत्मा को जागृत करने का यत्न करते हैं ताकि हम इस दुनिया से मुक्ति पा सकें? जन्म-जन्मांतरों तक हम ज़िंदगी के इस अहम मक़सद से अनजान रहे हैं। मगर परमपिता परमात्मा जिन चुनी हुई आत्माओं को अपने पास घर वापस बुलाना चाहता है उनके मार्गदर्शन के लिए वह देहधारी सतगुरु को इस दुनिया में भेज देता है जो उन्हें घर वापस पहुँचा देता है।

इस मार्ग को 'आत्मा का विज्ञान' कहा जाता है। जब हमें घर वापस बुलाया जाता है तब यह प्रयोग शुरू हो जाता है। यह खोज शरीर की प्रयोगशाला में की जाती है। हम शरीर, मन और आत्मा हैं। जब तक हम मन को वश में नहीं कर लेते, यह हमारी आत्मा पर हावी रहता है और इसे दुनिया में फँसाए रखने की पूरी कोशिश करता है। परमपिता परमात्मा की खोज में, सिर्फ़ चुनी हुई आत्माओं को ही अंदरूनी सफ़र पर ले जाया जाता है जहाँ आत्मा अपने कर्मों का लेखा-जोखा ख़त्म करके रूहानी तरक्की करती हुई मुक्ति प्राप्त कर लेती है।

चाहे हमें भजन-सिमरन और अपनी दुनियावी ज़िम्मेदारियों के बीच तालमेल बिठाने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ता है लेकिन अपने कर्मों का लेखा-जोखा खत्म करने के लिए हमें दोनों ही ज़िम्मेदारियाँ निभानी पड़ती हैं। मुक्ति मिलने पर शरीर और मन की ज़रूरत नहीं रहती।

हम इस रूहानी जागृति का अनुभव कर सकते हैं; यह महज़ सिद्धान्त या फुज़ूल की बात नहीं है। यह आंतरिक बदलाव के ज़रिए संभव है जो हमारी कल्पना से परे है। इस आंतरिक बदलाव के लिए, हमें अपनी ऊर्जा को बाहरी दुनिया जैसे कि अपनी नौकरी, धन-संपत्ति, रिश्ते-नातों से हटाकर अपने भजन-सिमरन में लगाना होगा। जब परमात्मा का प्रेम हमारी प्राथमिकता बन जाता है तब बाक़ी सब कुछ महत्त्वहीन और व्यर्थ लगने लगता है। मृत्यु के समय हमारे साथ कुछ भी नहीं जाता। इसलिए जितनी जल्दी हम मोह-माया के इन सभी बंधनों को त्याग देते हैं उतनी ही जल्दी हमारी आत्मा उन्नति करती है। संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि सिर्फ़ परमात्मा की भक्ति सदा क़ायम रहती है और इसमें लगाया समय ही सार्थक है। सूफ़ी पीर इनायत ख़ान के हवाले से पुस्तक अवेकनिंग: ए सूफ़ी एक्सपीरिएंस में लिखा गया है: “सिर्फ़ वही इनसान रूहानी मक़सद को पूरा कर पाते हैं जो परमात्मा के बारे में सचेत हैं।”

तो आओ हम भी परमात्मा के बारे में सचेत हों। अगर हम घर वापसी का सफ़र तय करना चाहते हैं तो हमें इस बात पर भरोसा होना चाहिए कि परमात्मा को जानना मुमकिन है और हमारे अंदर उसे जानने की सच्ची चाहत होनी चाहिए। हमें भरोसे, प्रेम और भक्ति-भाव से भजन-सिमरन करके इस रूहानी भेद को जानने की कोशिश करनी चाहिए। संत-महात्मा चाहते हैं कि शिष्य उन्हें अपना सब कुछ सौंप दें। वे हमारा दिल और हमारी रूह चाहते हैं क्योंकि सिर्फ़ वे ही प्यार से हमारी सँभाल कर सकते हैं। उन्हें इस बात से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि हम कितना कम, कितना धीरे, कितने बेमन से भजन-सिमरन करते हैं। सतगुरु हमारे हर प्रयास, हर

कोशिश को देखते और क़बूल कर लेते हैं और गुरु-शिष्य के इस नाते के ज़रिए परमात्मा से हमारा रिश्ता दिन-ब-दिन ज़्यादा मज़बूत होता जाता है।

गुरु असल में शब्द ही है। वह इनसान और परमात्मा के बीच की कड़ी है। वही जीवों को मालिक के पास वापस ले जाने के लिए आता है। सौंपी गई ज़िम्मेदारी को पूरा करके वह वापस उस शब्द में ही जा समाता है। इसी तरह, आत्मा (सुरत) भी उस शब्द की ही किरण है और किसी सच्चे गुरु की दया-मेहर से ही वह वापस उस शब्द में समाने के लायक बनती है। गुरु नानक साहिब भी यही फ़रमाते हैं, “सबद गुरु सुरत धुन चेला॥”

महाराज चरन सिंह जी, संत-मार्ग

जब आत्मा शब्द में समा जाती है तब परमात्मा के साथ फिर से रूहानी रिश्ता क़ायम कर लेती है। फिर हमारे हृदय की बेचैनी ख़त्म हो जाती है।



ख़्वाब से परे सच

जन्म-जन्म से, रूहें हमारी,
कर्म-क़ानून से बाँधी,
जगत में भटकें मारी-मारी।
हर नवजन्म मिले इक मौक़ा,
ज़ंजीर तोड़, ऊँचे चढ़ने का,
सच को पहचानने का।

सतगुरु बन आए प्रकाश दीप हमारे,
राह दिखाएँ घोर अंधियारे।
मेहर-दया से, हुआ हमें दीदार,
अंतर में है राह, जिस पर चल हम उतरे पार।

सिमरन करत, हुआ मन निश्चल,
प्रकट हुआ प्रकाश, दिव्य और असल।
अनहद शब्द, रहनुमा है धारा,
ज़ाहिर हुआ ख़्वाब से परे सच का नज़ारा।

प्रेम-दया से, हम पहुँचे तीर*,
कर्म न बाँधें अब ज़ंजीर।
सफ़र हुआ पूरा, सुरत भरी उड़ान,
सतगुरु प्रेम से, हम पहुँचे नूरी जहान।



* तट पर, किनारे पर।

हम इस प्रेम का अनुभव कर चुके हैं

हमारी इस ज़िंदगी का मक़सद क्या है? संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि हमें मनुष्य शरीर इसलिए मिला है ताकि हम परमात्मा से रिश्ता क्रायम कर सकें। हम अनगिनत जन्मों और योनियों में रिश्ते-नातों, उपलब्धियों, इंद्रियों के सुखों का अनुभव कर चुके हैं। हम चौरासी के चक्र में फँसे हुए हैं, यहाँ मिलने वाली नश्वर चीज़ों और सुखों के मोह में खोए हुए हैं और इस भ्रम का शिकार हैं कि हमें इस दुनिया में असल और स्थायी सुख मिल सकता है। दुनियावी चीज़ों में से संतुष्टि की तलाश करते-करते हम अपनी गहरी आंतरिक तड़प को कभी समझ नहीं पाते। हमें किसी चीज़ की कमी महसूस होती है और हम इस कमी को पूरा करना चाहते हैं।

संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि हम जिस तड़प को महसूस करते हैं वह हमारी आत्मा की अपने रचयिता से मिलाप की तड़प है। हम उस शाश्वत प्रेम, आनंद और शांति को ढूँढ़ते हैं जिसे हम कभी जानते थे और अब भूल चुके हैं।

असीसी के सेंट फ्रांसिस हमें बताते हैं कि हम सब अपने असल स्रोत को भूल जाने का दुःख मना रहे हैं:

अगर एक जादू की छड़ी सूरज को चाँद में बदल दे तो क्या चाँद उस शानदार चमक के खो जाने का शोक नहीं मनाएगा जो पहले कभी उसके पास थी? हम सब अपने असल वुजूद के खो जाने का शोक मना रहे हैं जिसे हम जानते थे और अब हमें उसकी कमी खलती है।

लव पोइम्स फ्रॉम गॉड: ट्वेल्व सेक्रेड वॉएसेस् फ्रॉम द ईस्ट एंड वेस्ट
डैनियल लैडिंस्की द्वारा अनुवादित

हमें याद नहीं है कि प्यार के सागर में डूबे रहना कैसा था। फिर भी मन और कर्मों के भारी बोझ के नीचे दबी हमारी आत्मा उस एहसास को भूली नहीं है। यह दोबारा उस परमात्मा से मिलाप करना चाहती है जो इससे प्यार

करता है और जिसके साथ हमारा संबंध है। इनसान परमात्मा का अंश है, परमात्मा ने इनसान को अपने ही रूप में बनाया है इसलिए इनसान में परमात्मा जैसे दिव्य गुण मौजूद हैं और पूरा ब्रह्मांड हमारे इस नश्वर शरीर में समाया हुआ है। लेकिन हम इस अंधकारपूर्ण जगत, दुनियावी चिंताओं के जाल में फँसे हुए हैं। हम अपनी रूहानी विरासत से बेखबर हैं, अपने पिछले जन्मों में किए कर्मों से अनजान हैं मगर फिर भी पिछले सभी बुरे कर्मों के लिए ज़िम्मेदार हैं।

हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी ब्रह्मांड के उन अटल नियमों के बारे में बताते हैं जो हमें इस सृष्टि में क़ैद रखते हैं:

यह जगत एक बहुत बड़ा जेलखाना है जिसे भूलभुलैया कहा जा सकता है क्योंकि इसमें हज़ारों दरवाज़े हैं जो इतने उलझानेवाले और एक जैसे हैं कि एक बार अंदर जाने के बाद कोई कभी बाहर नहीं निकल सकता।... [वह भूलभुलैया] जिसमें इनसान खो गया है, चौरासी की विशाल भूलभुलैया है, जिसमें वह युगों-युगों तक, एक शरीर से दूसरे शरीर में बार-बार जन्म लेता और मरता रहता है।...

इस भूलभुलैया में, अलग-अलग शरीर में जन्म लेकर जीव विकास की इस सीढ़ी पर ऊपर-नीचे आते-जाते रहते हैं। कोई भी—इस अंधकारपूर्ण दुखों की नगरी में रहने वाला एक भी जीव—यहाँ तक कि देवता भी जन्म और मृत्यु के चक्र से बचे नहीं हैं।...

बहुत लंबे समय तक निचली योनियों में भटकने के बाद, आत्मा आख़िरकार इनसान के रूप में जन्म लेती है।

डिस्कोर्सेस ऑन संत मत, वॉल्यूम 1

इस वर्तमान जन्म में, हम रचना की सीढ़ी के सबसे ऊपरी डण्डे पर हैं। मुक्ति के लिए हमें बस थोड़ी-सी मेहनत करने की ज़रूरत है। हमें समझाया जाता है कि हमें यह मनुष्य शरीर परमात्मा से रिश्ता जोड़ने के लिए मिला है।

परमात्मा से नाता जोड़कर इस भूलभुलैया से बाहर निकलने के बजाय हम इसे व्यर्थ गँवा देते हैं। जीवन के अस्थायी, क्षणभंगुर सुखों में लिप्त रहने के कारण हमें अपने कर्मों का हिसाब चुकता करने के लिए फिर से जन्म लेना पड़ता है।

तो फिर, हम उससे रिश्ता कैसे क्रायम कर सकते हैं जो हमारी कल्पना से परे है, जो अगम्य है? हमें परमात्मा से मिलाने और उनके पास वापस जाने का रास्ता दिखाने के लिए, परमात्मा संत-महात्माओं को इस संसार में भेजता है। जब परमात्मा की रज़ा होती है तब जिज्ञासु को किसी ऐसे पूर्ण देहधारी सतगुरु की संगति प्राप्त हो जाती है जिसकी लिव निरंतर परमात्मा से जुड़ी रहती है। नामदान के समय, सतगुरु शिष्य की सुरत को फिर से परमात्मा की रचनात्मक शक्ति 'शब्द' से जोड़ देते हैं जो हर जीव के अंदर धुनकारें देती है। हालाँकि 'शब्द' हमारे शरीर के रोम-रोम में प्राणों का संचार करता है लेकिन अनगिनत जन्मों में इकट्ठे किए कर्मों के भारी बोझ की वजह से हम इससे अनजान हैं।

'शब्द' की निर्मल धुनों को सुनने से हम फिर से परमात्मा की पहचान करने के क्राबिल बन जाते हैं। शब्द-धुन पर अपना ध्यान एकाग्र करके हम दुनिया का चिंतन करना छोड़ देते हैं और खुद को उसके हवाले कर देते हैं जो हमसे प्यार करता है और हमारा सहारा बनता है। भजन-सिमरन के अभ्यास द्वारा प्रेम के बढ़ने से हमें अपने अंदर परमात्मा की मौजूदगी का एहसास होने लगता है।

शेख फ़ख़रुद्दीन इराक़ी लिखते हैं कि वह तब तक अपने प्रियतम को बाहर खोजते रहे जब तक कि उन्होंने अपनी चेतना को अंदर ले जाना नहीं सीख लिया:

मैं पानी की तलाश क्यों करता रहता हूँ
जबकि मैं जीवन देनेवाले पानी पर तैरता हूँ?
जब मेरा प्रियतम हमेशा मेरे साथ है
तो मैं इधर-उधर क्यों भागता हूँ?

मैंने अंदर देखा और सिर्फ़ तुम्हें पाया –
ऐसा ही होता है
जब कोई भीतर देखना सीख जाता है।
द फेस इन एवरी रोज़

हम परमात्मा के साथ जो रिश्ता क्रायम करते हैं वह हमारी आत्मा के लिए नया नहीं है। हम फिर से उस एक से नाता जोड़ रहे हैं जो हमेशा से हमारे साथ है जो हमारा सबसे नज़दीकी साथी और दोस्त रहा है और जिसने हमें सब कुछ दिया है। अपने खोए हुए प्यार को पाने और इस दुनिया की भूलभुलैया से निकलने की चाबी उस रचनात्मक शक्ति 'शब्द' को सुनना है।

14वीं सदी के ईसाई धर्म के संत माइस्टर एकहार्ट, शब्द को "वायु" कहते हैं। आप समझाते हैं कि अज्ञानता की वर्तमान अवस्था में हम रूहानी जगत की खूबसूरती और अद्भुत नज़ारों पर विश्वास करने से इनकार कर सकते हैं। लेकिन एक दिन 'शब्द' हमारी अज्ञानता के इस अंधकार को मिटा देगा और हम परमात्मा के साक्षात दर्शन कर पाएँगे।

जन्म से अंधा इनसान बड़ी आसानी से
एक विशाल भू-दृश्य के शानदार नज़ारे
को सच मानने से इनकार कर सकता है।

वह उन सभी अजूबों को आसानी से नकार सकता है
जिन्हें वह छू, सूँघ, चख या सुन नहीं सकता।

लेकिन एक दिन हवा मेहरबान होगी
और तुम्हारी आँखों को ढकने वाले
उन छोटे-छोटे पैबंदों को हटा देगी।

और तुम्हें परमात्मा इतना स्पष्ट दिखाई देगा

जितना कि तुमने कभी खुद को भी नहीं देखा होगा।

लव पोइम्स फ्रॉम गॉड

वह दिन नज़दीक ही है जब 'शब्द' की दिव्य धुन अज्ञानता के पर्दे को हटा देगी और हमारी सत्य की खोज पूर्ण हो जाएगी। भजन-सिमरन के लिए की गई हमारी सभी कोशिशों और संघर्षों का परिणाम हमारी कल्पना से कहीं अधिक होगा। आंतरिक प्रकाश में से सतगुरु का नूरी स्वरूप प्रकट हो जाएगा। हमारे सामने वह होगा जिससे मिलाप के लिए हमारी आत्मा उस दिन से तड़प रही है जब से वह उससे बिछुड़ी है। 'शब्द' हमें प्यार से सराबोर करके, हमारे सीमित, तन्हा वुजूद से ऊपर उठाकर रचयिता में फिर से अभेद कर देगा। तब हमारे जीवन का मक़सद पूरा हो जाएगा।



इस संसार से उखाड़ लिए जाना

अगर किसी पेड़ की जड़ें ज़मीन में बहुत गहरी हैं और आप उस पेड़ को उखाड़ना चाहते हैं तो आपको बहुत तेज़ हवा की ज़रूरत है। आपको जड़ों को ढीला करने के लिए उन्हें गीला भी करना होगा ताकि तेज़ हवा आसानी से अपना काम कर सके। पिछले जन्मों के कर्मों के कारण इस दुनिया में हमारी बहुत सारी जड़ें फैली हुई हैं। हम इस दुनिया के सुखों में इतने डूबे हुए हैं कि जब तक संत हमें जड़ों से नहीं हिलाते, हम इस दुनिया से खुद को कभी नहीं उखाड़ पाएँगे। इसलिए वे कभी-कभी बहुत कड़े क़दम उठाते हैं; मैं कहूँगा कि उनका तरीक़ा बहुत, बहुत सख़्त होता है क्योंकि वे हमें इस दुनिया से उखाड़ कर पिता के पास वापस ले जाना चाहते हैं। एक छोटा पेड़ जिसकी जड़ें गहरी नहीं होती, उसे हल्की-सी हवा भी गिरा सकती है। लेकिन जिन पेड़ों की जड़ें बहुत मज़बूत, लंबी और ज़मीन में गहरी होती हैं, उन्हें एक बहुत ख़ास हवा की ज़रूरत होती है और उन्हें उखाड़ने से पहले बहुत ज़्यादा पानी और नमी की ज़रूरत होती है।

महाराज चरन सिंह जी, संत संवाद, भाग 1

